चन्दामामा
सितम्बर १९७०
75 P

असली मज़ा तो इसके स्वाद में है

चन्दामामा

सितम्बर १९७०

Colour Printing

By Letterpress...

...Its B. N. K's., superb printing that makes all the difference. Its printing experience of over 30 years is at the back of this press superbly equipped with modern machineries and technicians of highest calibre.
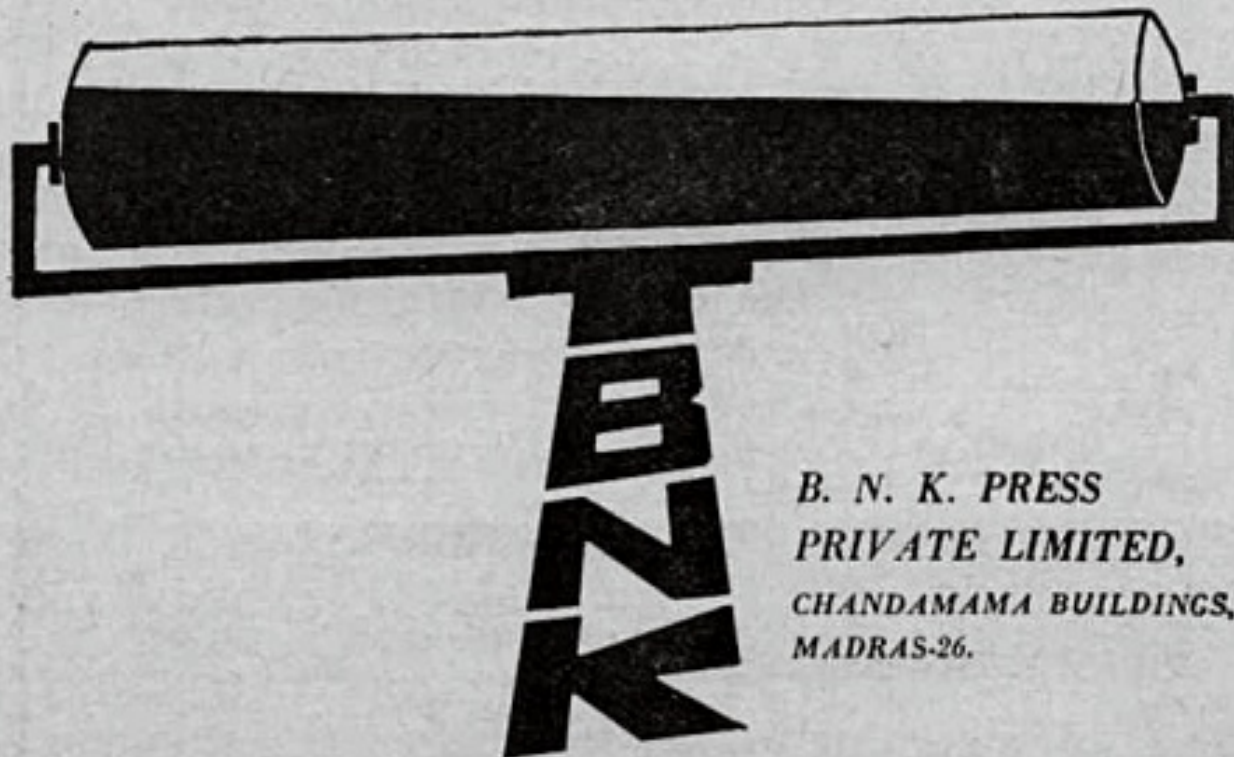
B. N. K. PRESS
PRIVATE LIMITED,
CHANDAMAMA BUILDINGS,
MADRAS-26.

लाइफ़बॉय
है जहाँ
तंदुरुस्ती
है वहाँ
LIFEBUOY
for health
लाइफ़बॉय
मैल मे छिपे कीटाणुओं
को धो डालता है
लिंटास- L.62-77 HI
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
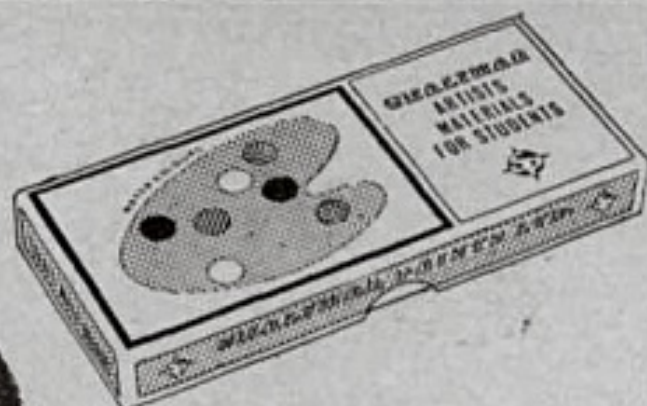
कला में ऐसे क्षण रोमांचकारी होते हैं...
ARTISTS MATERIALS FOR STUDENTS
....कक्षा में विद्यार्थी और चित्रशाला में निपुण चित्रकार दोनों के लिए
....जब सोचा हुआ चित्र केवल दिमाग में है, जब रंग केवल कल्पना में है तब आपको अपनी कल्पना के अनुरूप काम करने के लिए हमारी सनसनी पैदा करनेवाली रंग-माला की ज़रूरत पड़ती है।
शालीमार स्टुडेन्ट्स ऑयल एन्ड वाटर कलर्स
शालीमार आर्टिस्ट्स ऑयल, वाटर एन्ड पोस्टर कलर्स
के पीछे ६८ वर्षों का अनुभव है
शालीमार पेन्ट्स लि., कोर्टोल्ड्स (यू.के.) कम्पनी समूह के सदस्य

दांतों के जानलेवा दर्द से छुट्टी पाइए।

बिनाका फ्लोराइड अपनाइए।

बिनाका फ्लोराइड दंत–क्षय रोककर दर्द से छुटकारा दिलाता है।
यह दांतों को मजबूत और स्वस्थ बनाता है।
दांतों के खोखलों को भरने में मदद करता है।

भारत के एकमात्र फ्लोराइड टूथपेस्ट बिनाका फ्लोराइड में सोडियम-मोनो-फ्लोरो-फॉस्फेट (एस एम एफ पी) है जो—

- दांतों को नुकसान पहुंचाने वाले अम्ल–पदार्थों को बनने से रोकता है
- दांतों के इनेमल को मजबूत करता है
- दांतों को खोखला नहीं होने देता

CIBA Cosmetics

ULKA-CF-27a HIN

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
इस महीने की बेताल कथा "मंत्री का पुत्र" है। इस में मित्रता के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। मित्रता करने के लिए योग्यता के स्तर में समानता की आवश्यकता है। असमानता के कारण स्वार्थों में अंतर पड़ता है जिससे मित्रता बिगड़ जाती है। इसलिए मित्रता को जो लोग महत्व देते हैं, उन्हें समानता पर भी विचार कर लेना चाहिये।
'अपढ़ लोग' कहानी के द्वारा हमें यह मालूम होता है कि अशिक्षितों के प्रति न्याय करना कैसा कठिन है।
वर्ष : २३ सितम्बर १९७० अंक : १
CHITRA

क्षीरोदधेश्च गांभीर्यं जानाति मथनार्द्हिः;
लेह्नाय तटं प्राप्तकः कथं विद्याद्बिडालकः? ॥ १ ॥

[क्षीर समुद्र की गहराई का पता उसके मंथन करनेवाले विष्णु को ही मालूम है। लेकिन दूध चाटनेवाली बिल्ली को क्या पता?]

न भवति, न चिरं भवति, चिरंचेत्फले विसंवादी,
कोप स्सत्पुरुषाणां तुल्य स्नेहेन नीचानां। ॥ २ ॥

[दुर्जन में मैत्री और सत्पुरुष में क्रोध नहीं देखे जा सकते, अगर देखे भी जाय तो वे क्षणिक होते हैं। ये दोनों संभव भी हो, परिणाम में नहीं पाये जाते।]

राजन्, दुधुक्षसि यदि क्षिति धेनु मेतां
तेनाद्य वत्स मिव लोक ममुं पुषाण,
तस्मिश्च सम्य गनिशं परिपुष्यमाणे
नानाफलं फलति कल्पलतेव भूमिः। ॥ ३ ॥

[हे राजन, भूमि नामक गाय को तुम दुहना चाहे तो बचड़े के पोषण करने के समान तुम जनता का पोषण करो। जनता का भलीभांति पोषण करोगे तो भूमि कल्पवृक्ष की भांति अनेक प्रकार के फल देगी।]

विवेक
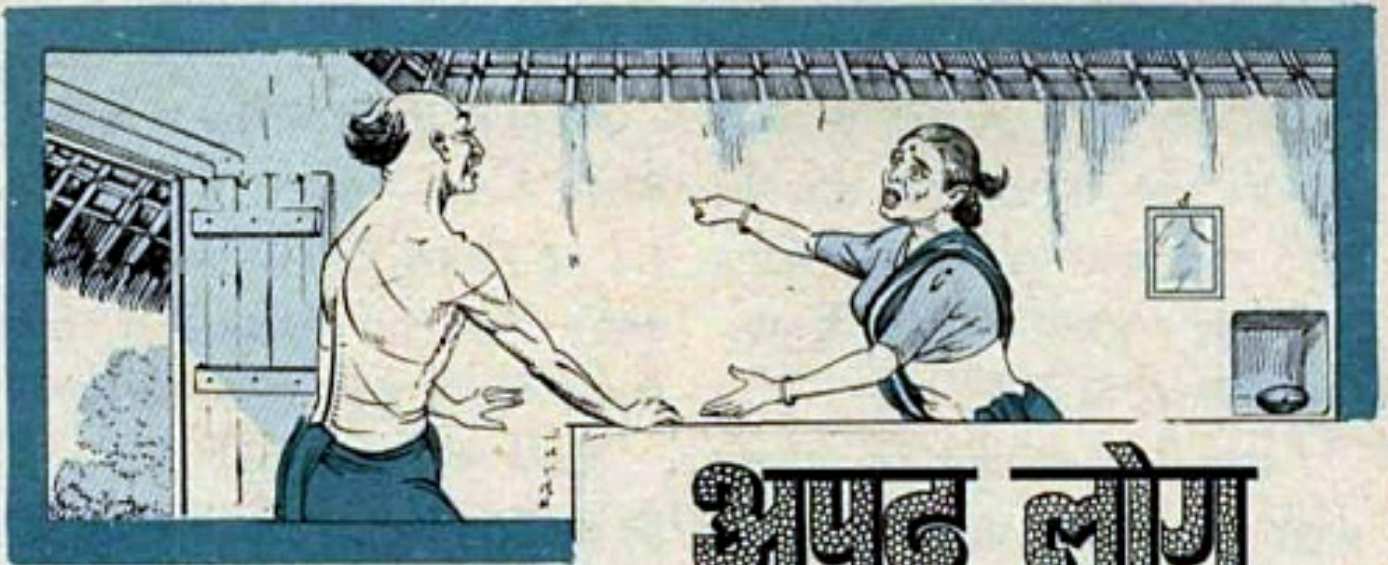
अपढ़ लोग

पुराने ज़माने की बात है। एक गाँव में एक गरीब किसान रहा करता था। उसके पास केवल एक गाय थी। वह खेतों की मेंडों पर की घास चरकर अपना पेट भर लेती थी।

एक बार वह गाय ज़मीन्दार के खेत के पास घास चर रही थी। उसे खेत में लहलहानेवाले हरे पौधे दिखाई दिये। उन हरे पौधों को चरने की इच्छा से गाय खेत में घुस गयी। इस पर ज़मीन्दार के नौकर ने लाठी लेकर गाय को दे मारा। एक ही वार से गाय मर गयी।

अपनी गाय के मरने पर गरीब किसान और उसकी पत्नी को बड़ा दुख हुआ। किसान ने ज़मीन्दार के पास जाकर गाय का हर्जाना माँगा। ज़मीन्दार ने किसान को हर्जाना न दिया, उल्टे उसे अपने नौकरों से दस कोड़े लगवा दिये।

किसान ने घर लौटकर सारी घटना अपनी पत्नी को सुनायी।

"ज़मीन्दार हमारे प्रति अन्याय करता है तो हमें राजा से इसकी शिकायत करनी चाहिए। सुनते हैं कि राजा बड़े धर्मात्मा हैं। वे ज़रूर हमारे प्रति न्याय करेंगे।" किसान की पत्नी ने समझाया।

लेकिन फ़रियाद कैसे करे? वे दोनों अनपढ़ थे। इसलिए उन दोनों ने एक लकड़ी के तख़्ते पर अपनी झोंपड़ी का चित्र, ज़मीन्दार का महल, उसका खेत, खेत की बाड़ी, उसका टूटा भाग, नौकर की मार से मरी हुई गाय का चित्र भी कोयले से अंकित किया। साथ ही ज़मीन्दार ने किसान को जो दस कोड़े लगवाये, उनके चिह्न के रूप में दस लकीरें भी खींच दीं। इस तरह फ़रियाद में सारी बातें अंकित की गयीं।

पोलैण्ड की लोककथा

इसके बाद किसान उस तख्ते को अपनी पीठ पर बांधे राजधानी की ओर चल पड़ा। चलते-चलते एक शिकार से किसान की भेंट हुई। शिकार ने किसान से पूछा–"तुम कहाँ जा रहे हो?"

"राजा से भेंट कर मुझे एक फ़रियाद करनी है। लो देखो, मेरी पीठ पर वह फ़रियाद बंधी है।" किसान ने कहा।

"यह कैसी फ़रियाद है?" शिकार ने पूछा। "क्या बताऊँ? मेरी दुधारू गाय को मार डाला है।" ये शब्द कहते किसान ने शिकार को अपनी पीठ पर बंधे तख्ते पर अंकित सारे चित्रों का ब्यौरा बता दिया।

किसान के मुंह से सारी बातें जानकर शिकार ने कहा–"तुम्हारी फ़रियाद ठीक है। यह फ़रियाद राजा को दिखाओगे तो तुम्हारे प्रति न्याय होगा।" ये शब्द कहकर शिकार अपने रास्ते चला गया।

किसान को यह बिलकुल पता न था कि वह शिकार ही उस देश का राजा है।

किसान जंगल को पारकर राजधानी में पहुँचा। राजमहल के पास अन्दर जाने की अनुमति उसे मिल गयी। वह सीधे सिंहासन के पास पहुंचा। वहाँ पर राजा बैठा था, उसके अगल-बगल में बारह मंत्री भी अपने अपने आसनों पर बैठे थे। राजा
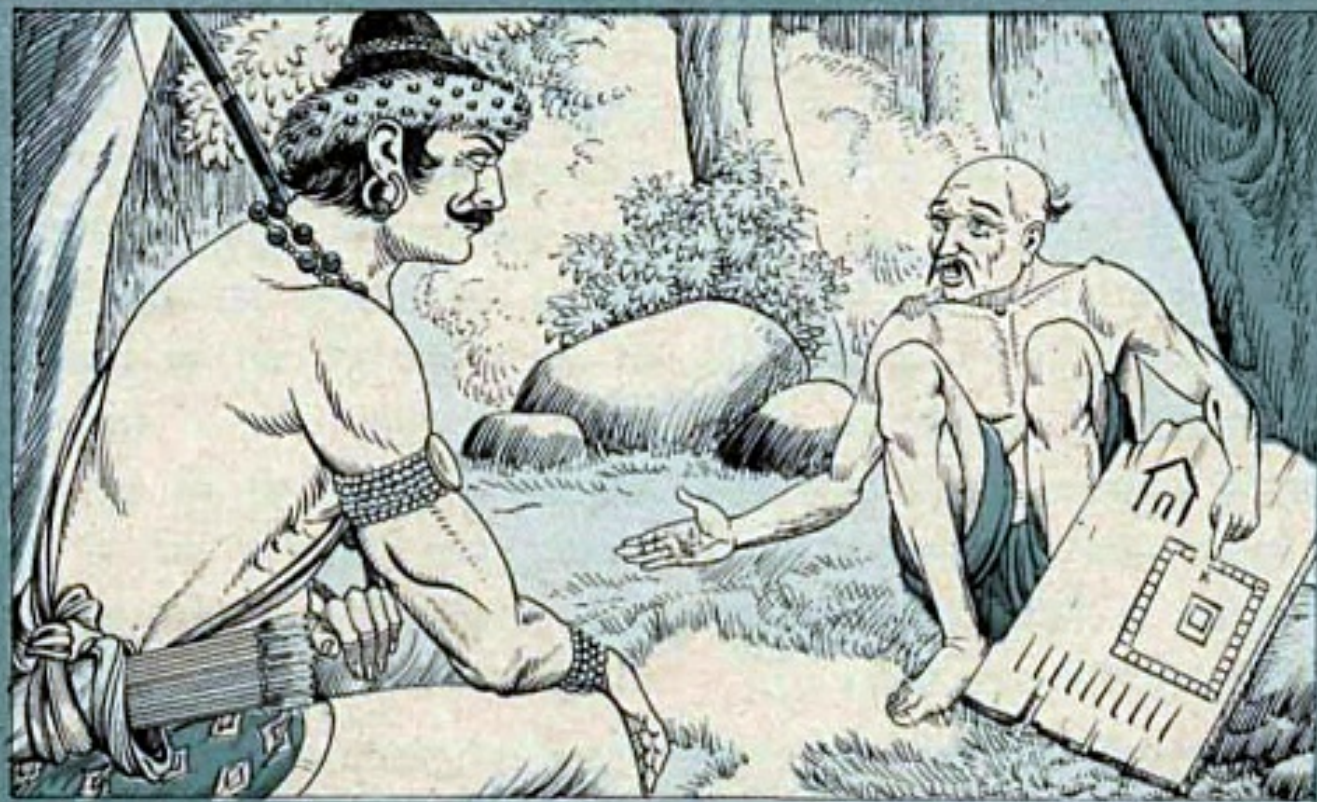
का वेश अब बदल चुका था, इसलिए किसान उसे पहचान न पाया। उसने अपने फ़रियादी तख़्ते को पास के एक मंत्री के हाथ दे कर कहा–"सरकार, यह फ़रियाद सुन लीजिये। सारी बातें इसमें बतायी गयी हैं।"

मंत्री ने कहा–"यह कैसी फ़रियाद है? हमारी समझ में बिलकुल नहीं आता।" इन शब्दों के साथ उसने उस तख़्ते को एक दूसरे मंत्री के हाथ दिया। इस प्रकार एक एक करके सब मंत्रियों ने उस तख़्ते को देखा, मगर किसकी समझ में न आया कि यह फ़रियाद कैसी है?

"यह कोई पागल मालूम होता है। इसे बाहर निकाल दो।" सब ने एक साथ कहा। राजा ने उनको रोकते हुए तख़्ता अपने हाथ में लिया। किसान को अपने पास बुलाकर पूछा–"यही चित्र तुम्हारी झोंपड़ी है न?"

"जी हाँ, महाराज!" किसान ने कहा।

"यह ज़मीन्दार का महल है न?" एक दूसरे चित्र को दिखाते राजा ने पूछा।

"जी हाँ, महाराज! आप ठीक कहते हैं।" किसान ने खुशी से उत्तर दिया।

"खेत की बाड़ी इसी जगह टूट गयी न?" राजा ने फिर पूछा।

"जी हाँ" किसान ने कहा।

"इसी में से तुम्हारी गाय खेत में घुस गयी और ज़मीन्दार के नौकर के लाठी से मारने पर मर गयी, ठीक है न?" राजा ने पूछा।

"हाँ, हाँ, महाराज! क्या बताऊँ?" किसान ने दुख भरे स्वर में कहा।

"ये दस लकीरें तुमको ज़मीन्दार ने कोडे के जो दस मार लगवाये, उन्हीं के चिह्न हैं न?" राजा ने पूछा।

किसान की खुशी का ठिकाना न रहा। वह राजा की ओर चमकती आँखों से देख बोला—"महाराज, आपकी अक़्लमंदी की तारीफ़ कैसे करूँ? ये सब सोच भी नहीं पाते, एक के भी दिमाग नहीं है।" किसान की ये बातें सुनकर सब मंत्री ठठाकर हँस पड़े।

"अच्छी बात है। तुम घर लौट कर अपनी पत्नी से बता दो कि मैं तुम्हारे प्रति न्याय करूँगा।" राजा ने समझाया।

किसान राजा से आज्ञा लेकर अपने गाँव को लौट आया। उसके पीछे पीछे ही ज़मीन्दार को राजा का फ़र्माना मिला।

ज़मीन्दार खुद किसान की झोंपड़ी में आया। उसने किसान से माफ़ी माँगी। राजा के आदेशानुसार किसान को एक घर बनवाकर दिया। एक गोशाला बनवायी, सात दुधारू गायें दीं, साथ ही साठ एकड़ बंजर भूमि किसान के नाम लिखवाकर अपने अन्याय का फल चुकाया।

किसान और उसकी पत्नी अब बड़े मजे से अपने दिन बिताने लगे। राजा की धर्म बुद्धि की किसान हमेशा तारीफ़ किया करता था। जब भी वह राजा की प्रशंसा करता, तब कहता—"ऐसे बुद्धिमान राजा ने उन अपढ़ लोगों को भारी वेतन देकर क्यों मंत्री का पद दे रखे हैं?"

कुंकुम की डिबिया

प्राचीन काल में कुंतल देश पर चित्रद्रव राज्य करता था। उसके इकलौती बेटी का नाम तारामती था। वह जब विवाह के योग्य हुई, तब एक घटना घटी। तारामती एक दिन चन्द्रवर्मा नामक भट को साथ ले देवी के दर्शन के लिए चल पड़ी। एक जगह पर उसे लोगों की बड़ी भीड़ दिखाई दी। उसने अपने भट को भीड़ के जमा होने का कारण जान लाने का आदेश दिया।

चन्द्रवर्मा ने लौट कर बताया—"कोई ज्योतिषी सब का भविष्य बता रहा है।"

"तब तो उस से पूछ आओ कि मेरा विवाह किसके साथ होगा?" तारामती ने फिर आदेश दिया।

"देवीजी, ये ज्योतिषी अपना पेट भरने के लिए अंट-संट कुछ बता देते हैं। उनकी बातें विश्वास करने योग्य नहीं होतीं।" चन्द्रवर्मा ने समझाया।

"मैं जो आदेश देती हूँ, उसका पालन करना तुम्हारा कर्तव्य है।" राजकुमारी ने कोध में आकर कहा।

चन्द्रवर्मा ने लौट कर बताया—"राजकुमारी जी, मैंने पहले ही बताया है न कि ज्योतिषियों की बातें सच नहीं होतीं।"

"मैं देख लूंगी, उसने सच बताया या झूठ? तुम यह बताओ कि उसने क्या कहा?" तारामती ने फिर पूछा।

"क्या बताऊँ, राजकुमारी जी? वह कहता है कि आप मेरे साथ विवाह करेंगी।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

ये बातें सुनने पर तारामती को क्रोध आया। उसने अपने फूलदान में से कुंकुम की डिबिया निकाल कर जोर से चन्द्रवर्मा के मुंह पर दे मारा और कहा—"दुष्ट! तुम मेरे साथ विवाह करोगे? तुरंत इस देश को छोड़ कर चले जाओ। वरना तुम्हारा

सुधीर कुमार

सर कटवा डालूंगी।" ये बातें कहकर राजकुमारी आगे बढ़ चली।

चन्द्रवर्मा के भाल पर घाव हो गया। उस में से खून बहने लगा। उसने अपनी पगड़ी से खून पोंछते हुए झुक कर कुंकुम की डिबिया हाथ में ली और उस देश को छोड़ कहीं चला गया।

कुंतल राज्य को छोड़ चन्द्रवर्मा मालव देश में पहुँचा। उस समय उस देश का राजा मर गया था। नये राजा को चुनना है तो गज की सूंड़ में माला डालकर वह जिसके गले में माला डाल देता, उसे राजगद्दी पर बिठाना उस देश का आचार था।

चन्द्रवर्मा जिस दिन मालव में पहुँचा, उसी दिन हाथी का जुलूस निकल रहा था। उस भीड़ में चन्द्रवर्मा भी था। पट्टगज ने सीधे आकर उसके कंठ में माला डाल दी। लोगों ने चन्द्रवर्मा को हाथी पर चढ़वाया और उसका राज्याभिषेक किया।

चन्द्रवर्मा ने गद्दी पर बैठने के बाद अपना नाम चन्द्रसेन बदल दिया। उसने शीघ्र ही सारी राजोचित विद्याएँ सीख लीं। मंत्रियों ने उसे विवाह करने की सलाह दी। अनेक देशों से राजकुमारियों के चित्र आये। उन में तारामती का भी चित्र था। उसे पुरानी घटना याद आयी, इसलिए उसने कहा कि वह तारामती के साथ विवाह करेगा। तारामती का पिता मालव राजा के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने को खुशी से तैयार हो गया।

चन्द्रसेन तथा तारामती का विवाह बड़े वैभव के साथ संपन्न हुआ। तारामती ने अपने पति के चेहरे की ओर देख पूछा– "यह दाग कैसा?" चन्द्रसेन ने कुंकुम की डिबिया निकाल कर उसे दिखाते हुए कहा–"मेरी पट्टमहिषी ने इस डिबिये से मुझे मारा था, यह उसी का दाग है!"

[३२]

[जहरीले साँप के मुँह में फँसे शिथिलालय के पुजारी को शिखिमुखी के दल ने बचाया। शिखिमुखी अपने अनुचरों की मदद से गोपुर के कलश के चारों तरफ़ के पत्थरों को हटाना शुरू किया। उस वक्त बड़े-बड़े त्रिशूल धारण किये हुये चार अघोरी हाथियों पर आये और उनको घेर लिया। बाद-]

अपने दल को घेरे हुए चार अघोरियों के अलावा उनकी मदद के लिए एक सौ अघोरी हाथियों पर आ रहे थे, यह समाचार सुनते ही विक्रमकेसरी के साथ सब लोग भयभीत हो उठे। बिना लड़े दुश्मन के अधीन होना अपमान की बात थी, साथ ही दुश्मन का सामना करना भी आत्महत्या करने के समान था। इसलिए वे सब पशोपेश में पड़ गये।

विक्रमकेसरी यह बात सोच ही रहा था कि क्या किया जाय? इसी समय अचानक शिखिमुखी चिल्ला पड़ा-" अजित, बीरभद्र तुम दोनों वृच्छिक नेता और नांगसोम को वापस खींच लाओ। हाथियों पर सवार अघोरियों के साथ वे कैसे लड़ सकते हैं?"

तुरंत अजित और बीरभद्र आगे बढ़े। नांगसोम तथा वृच्छिक नेता के कंधे

पकड़कर उनको रोका और शिखिमुखी का आदेश उन्हें सुनाया। वे दोनों क्रोध से अपने हथियारों को अघोरियों की ओर दिखाकर हिलाते हुए सर झुकाकर अनिच्छापूर्वक शिखिमुखी के दल के पास लौट आये।

शिखिमुखी ने पत्थरों को हटानेवाले अपने दल के लोगों को काम बंद करने का आदेश दिया और उच्च स्वर में बोला— "अघोरियों के ज़रिये हमारी किसी प्रकार की हानि न होगी। गोलभरा ग्राम के रास्ते के जंगल में हम इन लोगों से एक बार जो मिल चुके थे! मेरा विश्वास है कि ये अघोरी लोग हमारी मदद करेंगे!"

"जी हाँ, साहब! हम इन लोगों से मिले थे। लेकिन ये लोग महान क्रूर और हत्यारे हैं!" लंगड़े जांगला ने कहा।

"यह बात सच है, लेकिन इनके नेता घोरचित्त ने हमें अभय प्रदान किया है। लो, देखो, उसने खुद यह रुद्राक्षमाला मेरे हाथ में बंधी है!" यह कहते शिखिमुखी ने अपने हाथ की माला को सब को दिखाते ऊपर उठाया।

विक्रमकेसरी को ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी की वह घटना याद आयी, जब वे लोग अघोरियों से मिल चुके थे। वह मुस्कुराते हुए शिखिमुखी की ओर मुड़कर बोला— "शिखी, तुम्हारे कहे मुताबिक़ हमें इन अघोरियों से कोई खतरा न होगा। उल्टे इनके फालतू हाथियों की मदद से पत्थरों के ढेर को हटाकर जल्द हम शिथिलालय का पता लगा सकते हैं।"

"मैं भी यही सोचता हूँ, लेकिन एक बात है। अगर ये लोग घोरचित्त के शिष्य न हों तो हम मुश्किल में पड़ जायेंगे, पर यह बात कैसे जाने कि ये लोग घोर चित्त के शिष्य हैं?" शिखिमुखी ने कहा।

"ये लोग महाकाल के भक्त हैं। इसलिए उस काल की पूजा करनेवालों की ये लोग बिलकुल हानि नहीं करते!" लंगड़े जांगला ने कहा।

"यह बात सच है, शिखी साहब!" नांगसोम ने बताया।

"वृच्छिक माता से बढ़कर कोई देवी व देवता नहीं है! वह महाकाल कौन है? हम वृच्छिक जातिवाले मरने को तैयार हैं, मगर इन अघोरियों के देवता को हम नहीं मानेंगे!" ये शब्द कहते वृच्छिक नायक ने पत्थर की बनी अपनी कुल्हाड़ी उठायी और अपनी जाति के लोगों को पास आने की चेतावनी दी।

शिखिमुखी वृच्छिक नायक की मूर्खता और हठीलेपन से भलीभांति परिचित था। उसने जान लिया कि नाहक़ खून-खराबी होने जा रही है। इसलिए शांत स्वर में बोला–"वृच्छिक नायक! तुम इन अघोरियों की झंझट में न पड़ो। सिर्फ़ देखते रहो, हम संभाल लेंगे!" ये शब्द कहकर रुद्राक्षमाला को ऊपर उठाये जोर से चिल्ला पड़ा–"घोरचित्त की जय! जय, महाकाल की!"
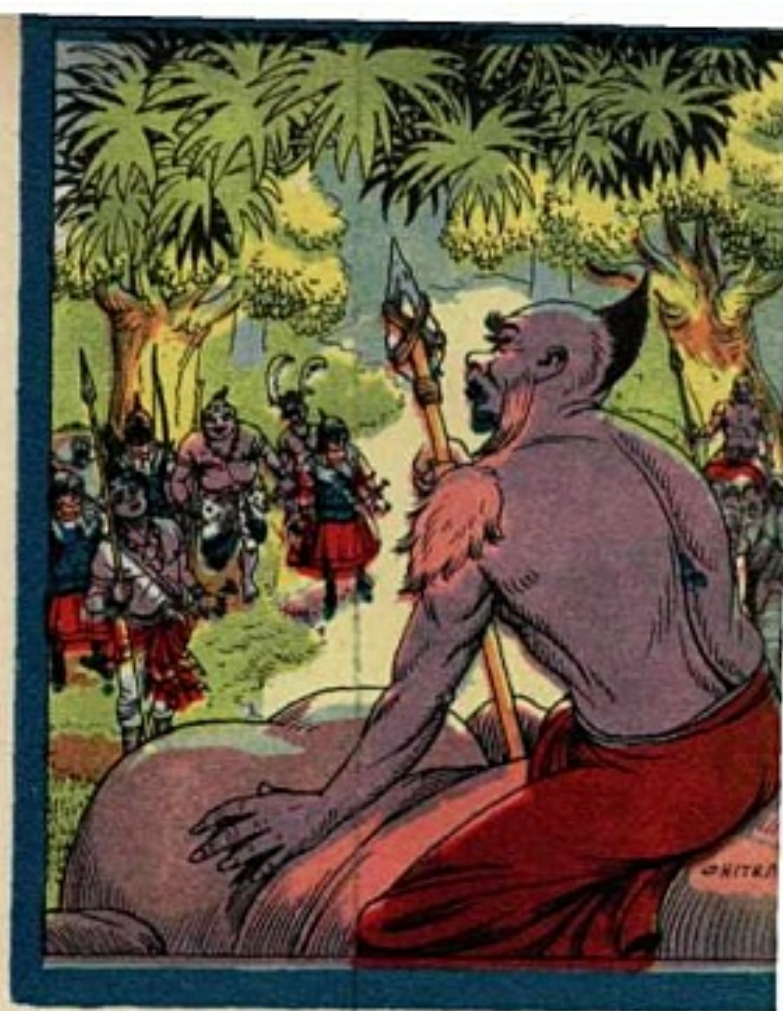
शिखिमुखी की यह चिल्लाहट सुनते ही हाथियों पर सवार चार अघोरियों ने त्रिशूल उतार दिये और चिल्लाया–"जय महाकाल की!" इसके बाद शिखिमुखी उनके निकट गया। अघोरियों में से एक ने शिखिमुखी तथा विक्रमकेसरी की ओर शंकाभरी दृष्टि दौड़ाते पूछा–"इसमें कोई दगा तो नहीं है न? हमने सुना है कि तुम्हारा नेता पुजारी बड़ा चालाक है! वह कहाँ पर है? तुम्हें घोरचित्त का नाम किसने बताया?"

शिखिमुखी ने अघोरियों को प्रणाम करके कहा–"हम लोग शिथिलालय के
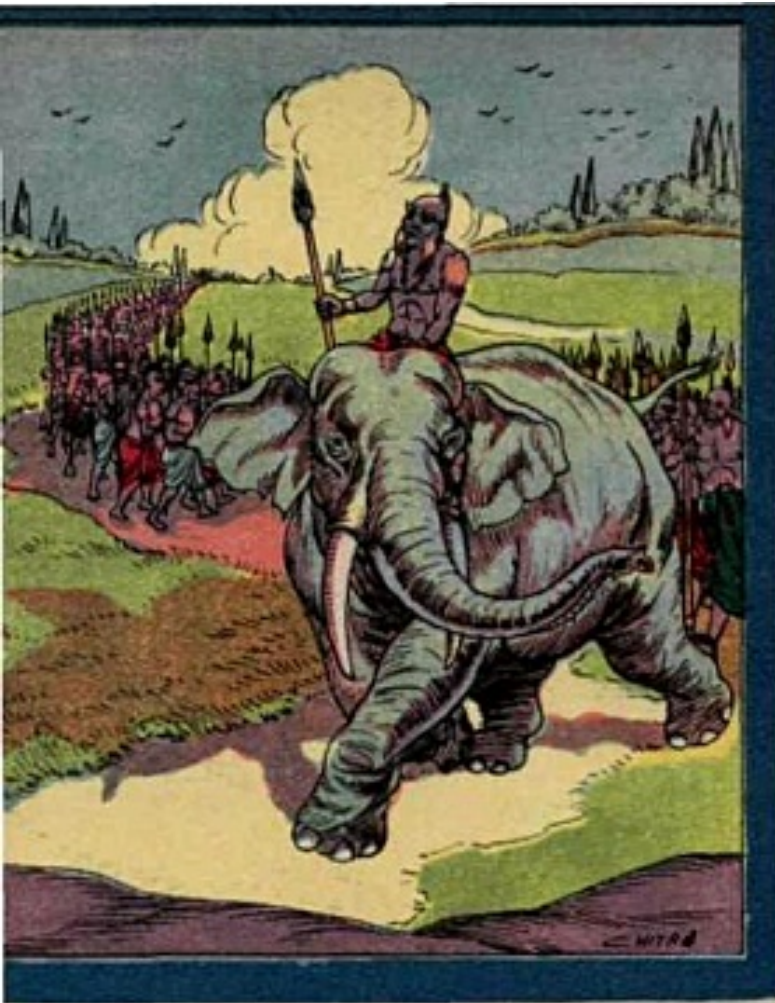
पुजारी के अनुचर नहीं हैं। वह हमारा जानी दुश्मन है! लो, देखो, घोरचित्त ने खुद मेरे हाथ में रुद्राक्षमाला बांध दी है।" इन शब्दों के साथ शिखिमुखी ने अपने हाथ में बंधी रुद्राक्षमाला उन्हें दिखायी।

अघोरी चकित हो एक दूसरे का मुंह ताकने लगे। उनमें से एक ने अपने साथी से कहा—"यह बात अचरज की नहीं? हम दुश्मन का खात्मा करने आये, पर ये लोग अपने को हमारे दोस्त बताते हैं। रुद्राक्षमाला की बात यक़ीन करने की है?"

दूसरे अघोरी ने हथेली से ललाट पर मारते हुए कहा—"इन शंकाओं से नाहक़ समय बीतता जा रहा है, पर कोई फ़ायदा नहीं। मैं जल्द अपने गुरु को बुला लाऊँगा।" वह तुरंत दौड़कर पास के टीले पर पहुँचा। वहाँ पर खड़े हो हाथ हिलाते ज़ोर ज़ोर से पुकारने लगा।

चार-पाँच मिनट बीतने पर पर्वताकारवाले एक हाथी पर एक वृद्ध सवार हो टीले पर आ पहुँचा। उसके पीछे कुछ और अघोरी तथा इम्भु जाति के लोग पैदल हाथी के पीछे चले आये।

दूर पर हाथी पर सवार वृद्ध को देख शिखिमुखी ने उसे पहचाना और खुशी में आकर चिल्ला पड़ा—"घोरचित्त की जय!"

घोरचित्त धीरे से हाथी को चलाते शिखिमुखी के दल के पास आया। एक बार सब की ओर दृष्टि दौड़ायी। चुपचाप हाथी से उतर पड़ा और शिखिमुखी से गले मिला। उस दृश्य को देखते ही विक्रमकेसरी के मन में यह विश्वास जम गया कि उनकी सारी तक़लीफ़ें दूर हो गयी हैं और उनका काम भी ज़रूर सफ़ल होगा। वह भी उत्साह में आकर चिल्ला उठा—"घोरचित्त की जय!"

CHITRA

इभ्यु जाति के लोग आ रहे हैं।" ये शब्द कहते घोरचित्त ने विक्रम को बड़ी आसानी से हाथी पर बिठाया।

हाथी पर खड़े हो विक्रम ने एक बार आसपास के प्रदेश को देखा। ऊँचे टीले के पीछे से कुछ इभ्यु जाति तथा अघोरी लोग उसी ओर आते दिखाई पड़े। उसकी समझ में न आया कि इभ्यु जाति के इतने लोगों को घोरचित्त ने कैसे अपने दल में मिला लिया।

विक्रम ने हाथी से उतरकर घोरचित्त के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और शिखिमुखी तथा नांगसोम को इभ्यु जातिवालों के बारे में बताया। शिखिमुखी ने भी आश्चर्य में आकर घोरचित्त से पूछा।

"यह सब उस महाकाल की दया है!" इन शब्दों के साथ घोरचित्त ने आसमान की ओर हाथ उठाकर नमस्कार किया और कहा—"उस भयंकर जंगल में तुम लोगों से मिलने के बाद मैंने शिथिलालय के पुजारी के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त की है और साथ ही इभ्यु जाति के एक वृद्ध के द्वारा मैंने इस टापू के शिथिलालय के बारे में भी समाचार जान लिया है। वह पुजारी बड़ा दुष्ट है। मुझे जब मालूम

उसके अनुचरों ने भी विक्रम के कंठ में कंठ मिलाया।

घोरचित्त मुस्कुराते विक्रमसिंह के पास आया और बोला—"विक्रम! तुम्हारे दादा विक्रमकेसरी हमारे गुरु थे। उन्होंने हमारा जो उपकार किया था, उसके बदले उपकार करने का मौक़ा पाकर मैं बहुत ही खुश हूँ। वे जिस शिथिलालय को देखना चाहते थे, उसे तुम देख सके। इस मंदिर के अहाते में जो भी शिल्प और संपत्ति है, सब तुम्हारी है। लो, इस 'भद्रकाली' पर चढ़कर देखो। उस संपत्ति को ढोकर ले जाने के लिए कुछ और

हुआ कि तुम लोग भी शिथिलालय की ओर गये हैं, तब उससे तुम लोगों को बचाने के लिए मैं अपने अनुचरों के साथ एक दूसरी नाव में रवाना हुआ। रास्ते में मुझे तुम्हारे पीछे चलनेवाली गोलभरा के इभ्यु लोगों की नाव दिखाई दी। हम सब मिलकर इस वृच्छिक टापू में आ पहुँचे।"

"आपकी इस सहायता के लिए हम अत्यंत कृतज्ञ हैं। यहाँ पर जो शिथिलालय दिखाई दे रहा है, वह सचमुच महाराजा विक्रमकेसरी की कल्पना का शिथिलालय हो तो हमें जल्दी-जल्दी उस पर ढके पत्थरों को हटाना होगा।" शिखिमुखी ने कहा।

"यह कौन बड़ा काम है? मेरे साथ कुछ और फालतू हाथी हैं। उनसे काम लेनेवाले योग्य इभ्यु जाति के लोग भी हैं।" घोरचित्त ने कहा।

इतने में घोरचित्त के साथ नौका में आये इभ्यु जाति के लोग वहाँ पर आ धमके। उन लोगों ने अपने ग्रामवासी नांगसोम के साथ विक्रम और शिखी को भी पहचाना। सब लोग खुशी में आकर उन्हें घेरकर नाचने लगे।

इस कोलाहल से घोरचित्त ने शिखिमुखी और विक्रमकेसरी को दूर ले जाकर पूछा– "वह दुष्ट शिथिलालय का पुजारी कहाँ पर है? इस टापू में हमने उसके तीन शिष्यों को पकड़ लिया है। वे हमारे बंदी हैं।"

"अब तक हम उस पुजारी के बारे में कहना ही भूल गये। आपके बंदी हुए वे तीनों लोग उसके शिष्य नहीं। हमारे प्रांत के जंगलों के डाकू और लुटेरे हैं। धन का लोभ देकर दुष्ट पुजारी उन्हें यहाँ तक ले आया है। वह पुजारी इस वक़्त मौत के मुँह में है।" इन शब्दों के साथ

शिखिमुखी ने घोरचित्त को पेड़ों की ओर ले जाकर डालों से बंधे झूले में बैठे शिथिलालय के पुजारी को दिखाया।

पुजारी की आँखें खुली थीं। पर वह अचल था। साँप के मुँह से बच निकलने पर भी उन घावों के कारण वह खतरे में पड़ा हुआ था। वह होश में ज़रूर था और उसके चारों तरफ़ जो कुछ हो रहा था, उसे पता था।

शिखिमुखी ने संक्षेप में वृच्छिक टापू का सारा समाचार घोरचित्त को सुनाया और कहा–"उस जहरीले साँप के मुँह से अगर मैंने पुजारी को बचाया न होता तो अब तक वह उसके पेट में हजम हुआ होता।"

दूसरे ही क्षण पुजारी में चेतना आयी। उसने दोनों हाथ उठाकर घोरचित्त को प्रणाम करते हुए कहा–"तुम महाकाल के भक्त हो! मैं शिथिलेश्वरी का पुजारी हूँ। मैं और ज्यादा दिन तक ज़िंदा न रह सकूँगा। पत्थरों से ढके शिथिलालय को जल्दी निकलवा दो। शिथिलेश्वरी के दर्शन कर मैं अपने प्राण छोड़ दूंगा।" इन शब्दों के साथ पुजारी की आँखों से लगातार आँसू बहने लगे।

घोरचित्त चार-पाँच मिनट तक लगातार पुजारी की आँखों में देखता रहा। वह हठात् कांप उठा और गद्‌गद् कंठ से बोला–"यह भले ही दुष्ट हो, लेकिन महान भक्त है। इसमें जरा भी संदेह नहीं है।" यह कहकर वह घूम पड़ा और अपने शिष्यों से बोला–"देखो, हाथियों को हाँक लाओ, जल्दी जल्दी मंदिर पर ढके पत्थरों को हटा दो।"

गुरु का आदेश पाकर सब अघोरी तथा उनके साथ आये इभ्यु जाति के लोग हाथियों पर सवार हो मंदिर की ओर चल पड़े। (अगले अंक में समाप्त)

मंत्री का पुत्र

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा—"राजन, तुम किसी मित्र के वास्ते इस प्रकार श्रम करते हो तो सावधान रहो, क्यों कि मनुष्यों के स्वार्थ में मैत्री कभी बाधक नहीं बनती। इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुम को महाराजा महेन्द्र की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: अवंतीपुर का राजा महेन्द्र था। उसके मंत्री का नाम वीरभूपति था। वे दोनों घनिष्ट मित्रों की तरह व्यवहार करते परस्पर सहयोग दिया करते थे।

कुछ वर्षों तक उन दोनों के कोई संतान न हुई। एक दिन राजा ने एक सपना

वेताल कथाएँ

देखा। सपने में एक मुनि ने दर्शन देकर राजा से बताया–"तुम्हारी राजधानी के दक्षिण के जंगल में संतान वृक्ष है। उसका फल तोड़ लाकर तुम अपनी पत्नी को खिलाओगे तो तुम्हारे एक पुत्र होगा।" यह कह कर मुनि गायब हो गया।

राजा जाग पड़ा। फिर उसने सोने का प्रयत्न किया। पर नींद न आयी। सपने पर राजा का विश्वास जम गया। सवेरा होते ही कालकृत्यों से निवृत्त हो राजा दक्षिण के जंगल की ओर चल पड़ा। वहाँ पर एक पेड़ के नीचे एक मूर्ति दिखाई दी। वह मूर्ति सपने में दीखे मुनि की जैसी थी। उस पेड़ पर दो ही फल थे।

उन फलों को देखते ही राजा को लगा कि उसके दो पुत्र पैदा हो जायें तो और अच्छा होगा। लेकिन उसी वक़्त उसे यह बात याद आयी कि मंत्री के भी कोई संतान नहीं है।

राजा ने सोचा–"मेरे दो पुत्र पैदा हो जायें तो शायद वे राज्य के वास्ते लड़ सकते हैं। इससे अच्छा यह होगा कि मेरे साथ मंत्री के भी एक पुत्र पैदा हो जाय तो वे दोनों हमारे जैसे राजा-मंत्री बनकर अच्छी तरह से राज्य कर सकते हैं।"

राजा पेड़ से दोनों फल तोड़ लाया। एक फल अपनी पत्नी को दिया, दूसरा फल मंत्री के हाथ रखते उसे समझाया कि वह फल उसकी पत्नी को खिलाया जाय। रानी तथा मंत्री की पत्नी दोनों गर्भवतियाँ हुईं और एक ही समय दोनों ने दो पुत्रों का जन्म दिया। राजा के पुत्र का विजय तथा मंत्री के पुत्र का नाम विमल रखा गया।

एक दिन ज्योतिषी ने मंत्री से कहा–"तुम्हारे पुत्र की जन्मपत्री बढ़िया है। वह शासन करेगा।" लेकिन मंत्री ने ज्योतिषी की बातों पर यक़ीन नहीं किया।

पाँच वर्ष की आयु में राजा व मंत्री दोनों के पुत्रों को एक गुरु के यहाँ भेजा गया। शिक्षा में दोनों लड़के होशियार थे, किंतु राजकुमार विजय की अपेक्षा मंत्री का पुत्र विमल प्रत्येक विद्या में आगे था। इस पर भी राजकुमार विजय मंत्री कुमार विमल से ईर्ष्या नहीं करता था, बल्कि उस पर गर्व करता था। राजा और मंत्री के बीच जैसी मित्रता थी, वैसी ही मैत्री उनके पुत्रों के बीच भी थी।

उनकी शिक्षा पूरा होने के पहले ही राजा ने अपने मरते समय राज्य का पूरा भार मंत्री को सौंपा। दोनों लड़के शिक्षा समाप्त कर राजधानी को लौट आये। राजकुमार विजय अभी ना बालिग था। इसलिए मंत्री ने दोनों लड़कों को एक साल तक देशाटन कर आने की सलाह दी और राजकुमार विजय को बताया कि देशाटन से लौटने पर उसका राज्याभिषेक किया जायगा।

मंत्री ने तो यह बात राजकुमार से कह दी, पर उसके मन में दूसरा ही विचार था। वह सोचने लगा—राजकुमार से उसका पुत्र ही सब तरह से योग्य है। अलावा इसके दरबारी ज्योतिषी ने बताया था कि उसका पुत्र राज्य करेगा। विमल उसके यहाँ पैदा होने के कारण ही तो मंत्री बननेवाला है? यदि विजय को मरवा डाले तो विमल को राजा बनाने का अधिकार उसके हाथ में है। यह सोचकर मंत्री ने विजय की हत्या करने के लिए दो भटों को नियुक्त किया। विजय तथा विमल जब देशाटन पर चल पड़े तब उनके पीछे मंत्री के द्वारा नियुक्त भट भी चल पड़े। मंत्री ने उन भटों को आदेश दिया कि राजकुमार विजय जब भी अकेला दिखाई पड़े, तब उसका वध कर डालना।

दोनों भट दस दिन तक विजय और विमल का गुप्त रूप से अनुसरण करते

गये। इसके बाद वे सब एक जंगल में पहुँचे। विजय थक गया था। वह एक पेड़ के नीचे आराम करने बैठा और विमल को पानी लाने भेज दिया।

विमल पानी की खोज़ में चल पड़ा। वह पेड़ों की आड़ में गया ही था कि मंत्री का भेजा एक भट तलवार लेकर विजय पर टूट पड़ा। विजय भी म्यान से झट तलवार निकाल कर अपनी आत्म-रक्षा करने लगा। तलवारों की टकराहट सुन विमल लौट आया और उस भट को बड़ी आसानी से बेहथियार किया। भट ने विमल के पैरों पर गिर कर गिड़गिड़ाया कि उसे मार न डाले, क्योंकि उसने मंत्री की आज्ञा का पालन किया है।

विमल का सर लज्जा से झुक गया। वह विजय के चेहरे को भी देख न पाया। राजकुमार ने विमल को सांत्वना देते हुये कहा–"तुम इस बात की बिलकुल चिंता न करो। बड़े लोगों के मन में भी कभी कभी दुर्बुद्धि पैदा होती है। इस से हमारी मित्रता में कोई कलंक न आयगा।"

वे देशाटन करने का विचार बदलकर राजधानी की ओर लौट पड़े। इस बीच में मंत्री का भेजा दूसरा भट वापस लौटा और मंत्री से सारी बातें बता दीं।

मंत्री एकदम घबरा गया। राज्य को छोड़ वह भाग जाने के प्रयत्न में ही था कि इतने में विजय और विमल भी लौट आये। मंत्री ने राजकुमार का इस तरह स्वागत किया, मानों वह कुछ न जानता हो! उसने राजकुमार से बताया कि यथाशीघ्र उसके पट्टाभिषेक का मुहूर्त निर्णय करवायेगा।

"मेरे राज्याभिषेक करने के पूर्व राज्य के दो भाग कीजिये, एक पर मेरा और दूसरे पर विमल का राजा के रूप में अभिषेक करवा दीजिये। यही मेरी

इच्छा है।" विजय ने कहा। मंत्री ने राजकुमार की इच्छा का विरोध न किया, उसने उसकी इच्छा की पूर्ति की।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा—"राजन्, मेरा एक संदेह है। उसे मारने का प्रयत्न करने वाले मंत्री से राजकुमार ने बदला क्यों नहीं लिया? उसने अपना आधा राज्य मंत्री के पुत्र को क्यों दान किया? क्या यह सोचकर कि मंत्री फिर से उसे मार डालेगा? या मंत्री के पुत्र को आधा राज्य देने से यह खतरा टल जायगा? इन संदेहों का समाधान जानते हुये भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने कहा—"यह स्पष्ट है कि राजकुमार ने अपनी तथा मंत्री कुमार की मैत्री को बड़ा महत्व दिया। जब मंत्री-पुत्र को यह मालूम हुआ कि मंत्री ने राजकुमार की हत्या कराने का प्रयत्न किया है, तब मंत्री पुत्र राजकुमार की ओर देख न पाया। ऐसी हालत में मंत्री को राजद्रोही ठहरा कर मरवा डाले तो राजकुमार और मंत्री-पुत्र की मैत्री में विघ्न पड़ेगा। साथ ही राजकुमार ने यह जान लिया कि मैत्री के लिए समान स्तर का होना आवश्यक है। उसका पिता और मंत्री में गहरी दोस्ती थी, लेकिन उन दोनों के बीच समता न थी। एक राजा था और दूसरा मंत्री। इसी प्रकार आगामी दिनों में राजकुमार तथा मंत्री पुत्र के बीच ऐसी ही असमानता पैदा हो जाय तो उनकी मैत्री शाश्वत नहीं बन सकती। यह बात जान कर ही राजकुमार ने अपने मित्र मंत्री-पुत्र को आधा राज्य देकर अपनी मैत्री के लिए गहरी नींव डाल दी है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बेकार की ज़िंदगी

जगद्गुरु शंकराचार्य के पास एक दिन एक कापालिक आया और उसने पूछा—"सब कोई कहते हैं कि आप महान व्यक्ति हैं। क्या मेरे साथ आप स्पर्धा कर सकते हैं?"

"तुम अपनी प्रज्ञा का प्रदर्शन करो।" शंकराचार्य ने कहा।

"मैं आसमान में विचर सकता हूँ।" यह कहकर कापालिक आसमान में उड़ा, बड़ी देर तक वहाँ संचार करके नीचे उतर आया।

"तुमको इस विद्या का अभ्यास करने में कितने वर्ष लगे?" शंकराचार्य ने कापालिक से पूछा।

"लगभग चालीस वर्षों से मैंने अभ्यास किया है।" कापालिक ने उत्तर दिया।

"इस छोटी सी बात के लिए तुमने अपनी चालीस साल की ज़िंदगी बरबाद की? इसके बदले तुम किसी महान पुरुष की सेवा करते या कौए का जन्म धारण करते तो सारी ज़िंदगी आसमान में उड़ सकते थे न?" शंकराचार्य ने कहा।

कापालिक का सर लज्जा से झुक गया।

अनुकूलवती

एक गाँव में गोपाल नामक एक किसान था। उसके यहाँ खेत था और दो गायें भी थीं।

एक बार गोपाल की पत्नी ने उस से कहा–"हमारे लिए एक ही गाय पर्याप्त है न। दूसरी गाय किसलिए? उसे हाट में ले जाकर बेच आओ। हमारे पास जो कुछ रुपये हैं, उनके साथ और रुपये जुड़ जायेंगे।"

गोपाल को अपनी पत्नी का सुझाव पसंद आया। वह एक गाय को लेकर हाट की ओर चल पड़ा। लेकिन वहाँ पर सौदा न पटा। शाम तक हाट में बिताकर गाय को हांकते घर की ओर चल पड़ा।

रास्ते में गोपाल से एक आदमी की मुलाक़त हुई। उसके पास घोड़ा था। जब उसे मालूम हुआ कि गोपाल गाय बेचना चाहता है, तब उसने अपना घोड़ा गोपाल को दे गाय ले ली। गोपाल घोड़ा लेकर लौट रहा था, तब एक बकरी वाले से उसकी मुलाक़ात हुई। गोपाल ने उसे घोड़ा देकर बकरी ले ली। थोड़ी दूर और चलने पर एक बतखवाला सामने आया। उसे बकरी देकर गोपाल ने बतख लिया। थोड़ी दूर और चलने पर एक मुर्गावाला आया, उसे बतख देकर मुर्गा ले लिया।

गोपाल को अब बड़ी भूख लगने लगी। इसलिए उसने एक गाँव में मुर्गे को बेच उन पैसों से भोजन किया। अंधेरा होते होते अपने गाँव को लौट आया। गोपाल के घर पहुँचते देख पड़ोसी रामनाथ ने उसे देखा और पूछा–"सुना है, तुम गाय बेचने गये थे! कितने में बेचा?"

"गाय को अच्छे दाम पर खरीदने कोई तैयार न था। इसलिए बदले में घोड़ा लिया।" गोपाल ने बताया।

"घोड़ा कहाँ?" रामनाथ ने पूछा।

दयानिधि

"उसे भी बदलकर बकरी ली।" इन शब्दों के साथ गोपाल ने रामनाथ को सारी कहानी सुनायी। रामनाथ ने आश्चर्य प्रकट करते कहा–"अरे, गोपाल, तुमने कैसी भूल की? बढ़िया दुधारू गाय को एक वक़्त भोजन के लिए बेच दिया और खाली हाथ लौट आये हो? घर पहुँचोगे तो तुम्हारी औरत तुमको खरीखोटी सुनायगी।"

"मेरी औरत भी बड़ी भली है! मैं जो भी करूँ वह बुरा नहीं मानती।" गोपाल ने कहा।

"आज तुमने जो काम किया, उसे तुम्हारी पत्नी सहन नहीं करेगी। चाहे तो दाँव लगाओ।" रामनाथ ने कहा।

"मेरे पास सौ रुपये हैं। सौ का दाँव लगाये देता हूँ।" गोपाल ने कहा।

"मैं इस शर्त पर सौ रुपये का दाँव लगा रहा हूँ कि तुम्हारी पत्नी तुमको खरीखोटी सुनायेगी। चलो, तुम्हारे घर!" वे दोनों गोपाल के घर पहुँचे। रामनाथ बाहर खड़ा हो गया और गोपाल भीतर गया।

"गाय बेच दी है न?" गोपाल की पत्नी ने पूछा।

"गाय किसी ने नहीं खरीदी, उसे देकर घोड़ा लिया।" गोपाल ने पत्नी से कहा।

"गाय से हमेशा घोड़ा ही अच्छा होता है न?" पत्नी ने कहा।

"थोड़ी दूर जाने पर घोड़ा देकर बदले में बकरी ली, बकरी देकर बतख लिया। बतख देकर मुर्गा लिया। बड़ी भूख लगी थी। इसलिए मुर्गा बेचकर उन पैसों से भर पेट खाना खाया।" गोपाल ने पत्नी को समझाया।

"बहुत अच्छा किया। मुर्गा लेकर हम लोग क्या करेंगे?" पत्नी ने कहा।

पति-पत्नी के वार्तालाप के खतम होने पर रामनाथ ने सोचा कि वह दाँव में हार गया है। इसलिए घर से सौ रुपये लाकर गोपाल को दे गया।

सैनिक की युक्ति

हँगेरी के सैनिकों को हुज़ार कहते हैं। फौज़ में भर्ती होने पर उन्हें बारह वर्ष अनिवार्य रूप से राजा की सेवा करनी पड़ती है। हँगेरी की गद्दी पर जब मात्यास नामक राजा बैठा, तब उसने देखा कि उसके सैनिक हमेशा शराब पिया करते हैं। हुज़ार सैनिकों को हर सप्ताह चार दीनार तनख्वाह दी जाती थी। इसलिए राजा की समझ में न आया कि इतनी कम रक़म में उसके सिपाही हमेशा कैसे शराब पिये रहते हैं। राजा ने फ़ौजी अफ़सरों से पूछा, पर वे कोई जवाब न दे सके।

इस रहस्य का पता स्वयं लगाने के विचार से राजा हुज़ार की पोशाकें पहनकर जेब में चार दीनार डाले साधारण सिपाही की भांति राजमहल से निकल पड़ा। वह एक दिन शाम को नगर के बाहर स्थित एक शराब की दूकान में पहुँचा।

शराब की दूकान पर पहुँचते ही उसे भीतर से हँसी-ट्ठे तथा कहकहे सुनायी दिये। राजा ने सोचा कि अपने चार दीनारों के साथ मनोरंजन करने के लिए यह अच्छी जगह है। यह सोचकर उसने भीतर क़दम रखा।

भीतर चार पुराने हुज़ार थे। उनमें से एक ने नये हुज़ार को देखते ही उसका कान पकड़कर पूछा—"अबे लौंडे, तुम फौज़ में कब भर्ती हुए?"

"एक सप्ताह पहले।" राजा ने उत्तर दिया। पुराने हुज़ार ने राजा के कंधे पर थपथपाते कहा—"तब तो तुम्हें बारह साल तक़लीफें उठानी होंगी। इसकी चिंता अब न करो। दो दीनारों की ब्राँदी खरीद लो, मज़ा उड़ायेंगे।"

"मेरे पास पैसे नहीं हैं। हम बहुत ही ग़रीब हैं।" राजा ने जवाब दिया।

विनोद राय

भाई, उधार में एक दीनार की ब्रांदी दो। अगले हफ़्ते चुका दूँगा।"

दूकानदार ने सिपाहियों को उधार देने से मना किया। योष्का ने दूकानदार को नाना प्रकार की गालियाँ दीं, तब पूछा—"चाहे तो तुम मेरी तलवार को गिरवी रखकर ब्रांदी दे दो।"

दूकानदार ने उस तलवार को सावधानी से छिपा रखा, पुराने हुज़ारों को थोड़ी-थोड़ी शराब देकर कह दिया कि दूकान के बंद करने का वक़्त हो गया है।

रात के नौ बज रहे थे, सब हुज़ार दूकान से बाहर आ गये।

"अच्छी बात है! मगर तुमको कल ही तनख्वाह मिली होगी न? कम से कम एक दीनार की शराब दिला दो, मुझे!" पुराने हुज़ार ने पूछा।

राजा को मानना पड़ा। उसने एक हुज़ार को शराब दिलायी, तो बाक़ी तीन पुराने हुज़ारों ने राजा से एक एक दीनार की शराब खरीदवा कर पी डाली। राजा की जेब खाली हो गयी।

मगर उन्हें वह शराब काफ़ी न हुई। उनमें से योष्का नामक एक व्यक्ति ने दूकानदार के पास जाकर पूछा—"देखो

इससे वे हुज़ार चुप न रहें। उस शराब की दूकान के नीचे ज़मीन तले एक कोठी में खाने के पदार्थ और शराब छिपाये रखते हैं। ज़मीन में सुरंग बनाकर कुछ समय पहले हुज़ारों ने उसे लूटा था। अब उन लोगों ने उस सुरंग को ढूँढ़ा और उसमें घुसकर खाद्य पदार्थ तथा शराब लाने के लिए राजा पर दबाव डाला। राजा को मानना पड़ा। वरना वे लोग उसे मार डालते। हुज़ार लोग दुस्साहस और दुष्टता के लिए मशहूर होते हैं।

ज़मीन तले की कोठी से खाद्य पदार्थ व शराब चुरा कर हुज़ार पी गये, तब अपने अपने बैरकों में चले गये। बैरकों में देरी से जाने पर भी पहरा देनेवाले सिपाहियों ने उन्हें नहीं रोका।

पुराने हुजारों के लिए सोने के कमरे थे, पर राजा के लिए कोई कमरा न था। योष्का ने ज़मीन पर एक कंबल बिछा कर उस पर राजा को लेटने को कहा।

राजा को नींद न आयी। वह हुज़ारों पर बहुत नाराज़ था। इन हुज़ारों ने सारा धन पीने में बरबाद किया, उलटे उससे चोरी भी करवायी। उसे गालियाँ भी दीं। उसने मन में निश्चय किया कि योष्का को अच्छा सबक़ सिखाना चाहिए। यह सोचकर वह बैरक में से उठकर मुंह अंधेरे राजमहल को लौट आया।

सवेरा होते ही सब हुज़ारों को ख़बर मिली कि सब हुज़ार अपने हथियारों के साथ क़वायद करने आ जावे। बाक़ी सब हुज़ार अपनी अपनी तलवार धारण कर रहे थे, तब योष्का ने कई लोगों से पूछा कि कोई उसे तलवार दे। आख़िर उसने एक बढ़ई से लकड़ी की तलवार बनवा कर उसे म्यान में रखा और कवायद पर चल पड़ा। कवायद पर आये हुए हुज़ारों में से
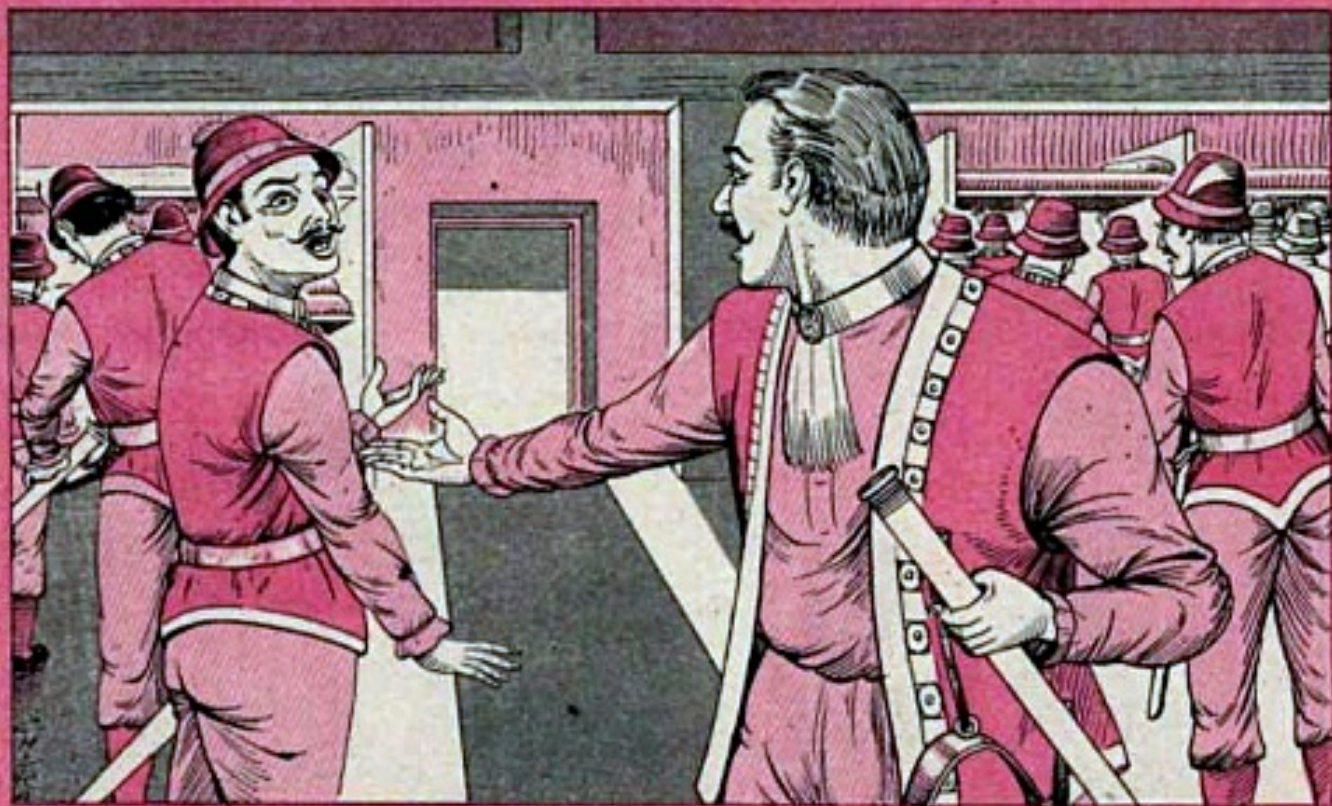
योष्का को राजा ने पहचान लिया और देखा कि उसके पास तलवार है कि नहीं! योष्का की कमर में म्यान लटक रहा था। राजा का विचार था कि यह रहस्य प्रकट कर कि म्यान में तलवार नहीं है, उसे दण्ड देना चाहिये।

किसी अपराध पर एक हुज़ार को मौत की सज़ा दे उसे क़ैद में रखा गया था। राजा ने अब उस सैनिक को बुला लाने का आदेश दिया। मौत की सज़ा पाये हुए सैनिक को सबके सामने लाया गया।

राजा ने योष्का को बुला कर उसे आदेश दिया–"तुम इसका सर काट दो।"

योष्का के पैर कांप उठे। वह अपनी लकड़ी की तलवार से सैनिक का सर कैसे काटेगा? इसलिए उसने बड़ी विनय से कहा–"महाराज, खून बहाना मैं नहीं चाहता; और चार साल मुझे हुज़ार का काम दे तो मैं खुशी से करने को तैयार हूँ। इसलिए मेहर्बानी करके मुझे इसका सर काटने की आज्ञा न दीजियेगा।"

राजा ने क्रोध में आकर गरजते कहा–"मेरी आज्ञा का पालन करो।"

"महाराज, आपकी आज्ञा का पालन करना ही है तो मुझे थोड़ी देर भगवान की प्रार्थना करने दीजिये।" योष्का ने निवेदन किया।

राजा ने योष्का की बिनती मान ली।

योष्का ने गहरी साँस लेकर आसमान की ओर देखते कहा–"भगवान, इस हुज़ार पर दया करो। तुम मेरी तलवार को लकड़ी की तलवार बना दो, जिससे मैं इस सैनिक का प्राण हर न सकूँ।" ये शब्द कहते उसने म्यान से तलवार खींची और उसे राजा को दिखाते कहा–"महाराज, देखिये! भगवान ने मेरी प्रार्थना सुन ली है।"

राजा योष्का की युक्ति पर खुश हुआ। उसे माफ़ कर दिया।

चालाक

पुराने ज़माने में मगध पर सोमदत्त नामक एक राजा राज्य करता था। उसके चन्द्रलेखा नामक एक पुत्री थी। वह बड़ी ही सुंदर थी। यह समाचार जानकर कलिंग के राजा शूरसेन ने सोमदत्त के पास खबर भेजी—"मैं आपकी कन्या के साथ विवाह करना चाहता हूँ। इसलिए यथाशीघ्र विवाह की तैयारी करे।"

शूरसेन बिलासी, दुर्जन तथा क्रूर था। मगर वह सोमदत्त से बलवान था। सोमदत्त जानता था कि बलवान के साथ दुश्मनी मोल लेना ठीक नहीं है। फिर भी उसने दूत के पास कहला भेजा—"मेरी पुत्री अभी युक्तवयस्का नहीं हुई है, जब उसका विवाह होगा, तब स्वयंवर के द्वारा ही होगा।"

यह संदेश शूरसेन को अपमान-सा लगा। उसके मन में मगध राज्य पर अधिकार करने की लालसा भी थी। फिर भी उसने सोचा था कि चन्द्रलेखा के साथ विवाह करने पर बिना युद्ध के उसकी इच्छा की पूर्ति हो जायगी। अब वह मौक़ा हाथ से निकल चुका था। इसलिए शूरसेन ने निश्चय कर लिया कि युद्ध के द्वारा पहले मगध पर अधिकार कर ले, तब चन्द्रलेखा के साथ विवाह करे।

सोमदत्त को यह समाचार मिलते ही डर गया कि शूरसेन मगध पर आक्रमण करने की तैयारियाँ कर रहा है। उसने मंत्रियों से परामर्श किया तो सबने तरह-तरह की सलाहें दीं। एक ने बताया कि शूरसेन के साथ चन्द्रलेखा का विवाह करके युद्ध के खतरे से बच जाना उचित होगा। दूसरे ने समझाया कि चन्द्रलेखा का विवाह किसी दूसरे राजा के साथ निश्चय कर युद्ध में उसकी सहायता पाना बेहतर होगा। एक और ने बताया कि शूरसेन को धन

सुधाकर पांडे

का लोभ देकर उसके साथ संधि कर लेना बुद्धिमानी होगी।

ये सब सलाहें सोमदत्त को पसंद न आयीं। युद्ध से बचना असंभव था। युद्ध के द्वारा विनाश निश्चित है।

राजा सोमदत्त इसी डर से परेशान था। एक दिन एक युवक ने आकर राजा से कहा–"महाराज, मैंने सुना है कि हम पर दुश्मन हमला करने जा रहा है। मैंने एक उपाय सोचा है कि युद्ध के विना ही शत्रु को वापस भेजूं। इस उपाय को अमल करने के लिए मेहर्बानी करके मुझे एक धनुष तथा एक हज़ार बाण दिलवा दीजिये।"

"तुम कौन हो? धनुर्धारी हो? तुम अकेले क्या दुश्मन के साथ युद्ध करोगे?" राजा ने पूछा।

"मैं एक लकड़हारा हूं, महाराज, मैंने जंगल में अनेक धनुर्धारियों को देखा है, मगर मैंने कभी धनुष का प्रयोग नहीं किया है। मेरा उद्देश्य युद्ध के विना दुश्मन को वापस भेजना ही है।"

राजा को संदेह हुआ कि लकड़हारा उसके साथ मज़ाक़ कर रहा है।

"युद्ध भूमि में आई हुई फौज को वापस भेजना हँसी-मज़ाक नहीं है? मैं तुम को कठिन दण्ड दूँगा। संभल कर बात करो।" राजा ने क्रोध में आकर कहा।

"मेरा प्रयत्न असफल रहा तो दुश्मन ही मुझे मार डालेगा। महाराज, मुझे सज़ा देने का श्रम उठाने की आपको ज़रूरत न पड़ेगी। मैंने आपसे केवल एक धनुष और और हज़ार बाण ही तो मांगे हैं। इसकी पूर्ति करना आप के लिए कोई कठिन काम नहीं है। मेरी प्रार्थना सुन लीजिये।" युवक ने बताया।

राजा को लगा कि युवक की बातों में सचाई और आत्मविश्वास भरे हैं। इसलिए

राजा ने तत्काल ही उसे एक धनुष और हज़ार बाण दिलाये।

उसी दिन राजा को दुश्मन का मगध पर हमला करने की खबर मिली।

लकड़हारा जंगल में चला गया। ऊँचे ऊँचे पेड़ों की डालों पर बाण चुभोकर बाण के चारों तरफ़ सफ़ेद वृत्त बनाये। जंगल के सभी पेड़ों पर उसके बाण ही चुभे हुए थे।

कलिंग की सेना ने जंगल के पार मैदान में डेरा डाला। कलिंग के सैनिक स्वेच्छापूर्वक जंगल में प्रवेश कर घूमने लगे। उन्हें पेड़ों पर निशाने बांध छोड़े गये बाण दिखाई दिये। धनुर्धारी का पता तो उन्हें न लगा, पन उसकी निशानेबाज़ी पर वे सब चकित रह गये।

पेड़ों पर लगे बाणों को देखते मगध के सैनिक एक कुंड के पास आये। कुंड के किनारे बैठ कर एक युवक खाना खा रहा था। उसके बाजू में एक धनुष तथा थोड़े से बाण थे। वे बाण ठीक वैसे ही थे, जैसे पेड़ों पर चुभे हुए थे।

"क्या तुमने ही इन पेड़ों पर बाण छोड़ रखे हैं?" सैनिकों ने उस युवक से पूछा।

"जी हाँ।" युवक ने जवाब दिया।

"अरे, तुम तो बड़े अच्छे निशानेबाज़ मालूम होते हो?" सैनिकों ने उसकी तारीफ़ की।

"मैं अभी अभ्यास कर रहा हूँ।" लकड़हारे ने जवाब दिया।

सैनिक उस युवक को अपने सेनापति के पास ले गये। युवक उनके साथ चुपचाप चल पड़ा।

शूरसेन और उसका सेनापति एक खेमे में बैठकर वार्तालाप कर रहे थे, तभी वे सैनिक उस युवक को उनके पास ले गये और उसकी निशानेबाज़ी की तारीफ़ की।

"तुमने मेरी फौज को देखा है न? क्या तुम्हारे राजा युद्ध के लिए तैयार नहीं हुए हैं?" सेनापति ने युवक से पूछा।

"मेरे राजा तो युद्ध के लिए पहले से ही तैयार हैं।" युवक ने जवाब दिया।

"तब तो तुम सेना में क्यों भर्ती नहीं हुए? यहाँ जंगल में क्या करते हो?" शूरसेन ने पूछा।

"मैं अभी बाण-विद्या का अभ्यास कर रहा हूँ। मेरे जैसे कच्चे आदमी को हमारे राजा फौज में भर्ती नहीं करते। मुझ से बढ़कर कुशल पाँच हजार धनुर्धारी हमारे राजा की सेना में हैं। फौज में भर्ती होने की योग्यता पाने के लिए मैं इस जंगल में अभ्यास कर रहा हूँ।" युवक ने समझाया।

"हमारे साथ युद्ध करके क्या तुम्हारे राजा हमें जीत सकते हैं?" शूरसेन ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"युद्ध करके देखिये! आप ही को पता लग जायगा।" युवक ने कहा।

शूरसेन ने उस युवक को भेज दिया। इसके बाद बड़ी देर तक अपने सेनापति से चर्चा की। अंत में निर्णय किया कि फौज को वापस ले जाना ही उचित होगा।

जब सोमदत्त को मालूम हुआ कि कलिंग की सेनाएँ युद्ध के लिए तैयार हो आ गयीं, पर चुपचाप वापस चली गयीं; तब राजा सोमदत्त को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने लकड़हारे को बुलवाकर पूछा— "अरे दुश्मन युद्ध किये बिना वापस लौट गया है! तुमने क्या किया?"

युवक ने सारी कहानी सुना दी। राजा ने उसकी युक्ति पर प्रसन्न हो उसे अपने दरबार में नौकरी दी। दो साल तक उसे सब तरह की विद्याएँ सिखाकर उसी के साथ अपनी पुत्री का विवाह किया।

धूर्त बुढ़िया

[३]

खालिद ने दिलैला से उसकी चोरियों तथा दगाबाजियों का विवरण मांगा।

"आप जो पूछते हैं, मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रहा है। मैंने अपनी ज़िंदगी में कभी चोरी तक नहीं की है।" दिलैला ने जवाब दिया।

शाम हो चुकी थी, इसलिए दिलैला की चोरियों का फैसला करने का वक़्त न रहा। इसलिए खालिद ने निश्चय किया कि दिलैला को रात भर क़ैद में रखा जाय और सुबह फ़ैसला किया जाय!

मगर जेल के अधिकारी ने दिलैला को रात-भर क़ैद में रखने से इनकार किया और बोला—"यह तो बड़ी धूर्त मालूम होती है। धोखा देकर यह कहीं भाग जाय तो मेरी नौकरी चली जायगी।"

"तुम ठीक कहते हो! अच्छा तो यह होगा कि इसका फ़ैसला होने तक चार लोगों के दीखने योग्य स्थान में रखकर इस पर पहरा बिठाना उचित होगा।" खालिद ने कहा।

खालिद घोड़े पर सवार हुआ, उसके पीछे पाँच फ़रियादी दिलैला को घसीटते नगर के बाहर चल दिये। वहाँ पर एक मैदान में दिलैला को एक खंभे से बांधकर पाँचों फ़रियादियों को उसके पहरे पर नियुक्त किया और खालिद घर चला गया।

पाँचों फ़रियादी दिलैला के चारों ओर बैठ गये। उसे बड़ी देर तक गालियाँ देकर अपना सारा क्रोध उतार दिया। लेकिन खाने के बाद उन्हें ज़ोर की नींद आयी, क्यों कि वे तीन रातों से जाग रहे थे।

गुलशन राय

आधी रात बीत चुकी थी। दो मुसाफ़िर आमने-सामने से आये और उस जगह आ मिले। एक यात्री नगर से बाहर जा रहा था और दूसरा बाहर से नगर की ओर जा रहा था। उन दोनों की बातचीत दिलैला को साफ़ सुनाई दे रही थी।

"बगदाद में कौन चीज सबसे बढ़िया है?" नगर में आनेवाले ने पूछा।

"मलाई लगायी गयी शहद की रोटियाँ बड़ी मज़ेदार होती हैं। मैं तीन दिन नगर में रहा, तीनों दिन मैंने ये ही रोटियाँ खायी हैं; मगर और खाने की इच्छा होती है।" जानेवाले ने कहा।

"अच्छी बात है! मैं जितने दिन नगर में रहूँगा, उतने दिन पैसों की परवाह किये बिना मलाई लगायी व शहद में भिगोयी रोटियाँ ही खाऊँगा।" आनेवाले ने कहा।

नगर से जानेवाला आदमी आगे बढ़ गया। आनेवाला व्यक्ति दिलैला की ओर आया।

इस बीच में दिलैला ने उनका वार्तालाप सुन रखा था। उसके दिमाग में एक बढ़िया विचार आया। उसने सोचा कि अगर उसकी यह चाल चली तो वह यहाँ से भाग सकती है।

"मुझे नहीं चाहिये! मैं नहीं खाऊँगी।" दिलैला चिल्लाने लगी।

जानेवाला व्यक्ति दिलैला के निकट आया और पूछा—"तुम कौन हो? तुमको क्यों इस तरह खंभे से बांध दिया है? क्या खाना नहीं चाहती हो?"

"क्या कहूँ, भाई साहब! मेरे शौहर ने शहद की रोटियाँ तैयार करके, उन पर मलाई लगाकर बेच-बेचकर लाखों कमाया। मुझे पहले कुछ दिन तक वे रोटियाँ अच्छी लगीं। लेकिन धीरे धीरे उनका नाम सुनते ही क़ै होने लगी। परसों हमारी दूकान में एक अमीर आया। उस वक़्त

मेरे पति ने अमीर के साथ मुझे भी शहद में भिगोयी रोटियाँ खाने को कहा। मैंने खाना चाहा, लेकिन ऐसा लगा कि मुझे मानों क़ै होनेवाली है। इस पर अमीर को शक हुआ। वह शहद की रोटियाँ खाये बिना ही चला गया। मेरे पति को नुक़सान हुआ। उसने जो सारी रोटियाँ तैयार करायी थीं, वे सब बेकार हो गयीं। मगर गलती मेरे पति की थी, उसको मुझसे ज़बर्दस्ती रोटियाँ खिलाना नहीं चाहिये था। फिर भी सारा इलज़ाम मुझ पर थोप दिया और मुझ पर फ़रियाद किया कि मैंने उसके व्यापार को बिगाड़ दिया है। न्यायाधिकारी ने मुझे शहद की रोटियाँ खाने की सज़ा दे इस खंभे से बंधवा दिया। सवेरा होते ही राजभट शहद की रोटियाँ ले आयेंगे। जब तक मैं न खाऊँ तब तक मुझे खाना न देंगे। मैं तीन जून से भूख से मरती जा रही हूँ। मैं अपनी तक़लीफ़ें क्या बताऊँ, भाई साहब?" दिलैला ने समझाया।

"बेचारी तुम को कैसी तक़लीफ़ आ गयी? मुझे यह सजा होती तो क्या ही अच्छा होता?" परदेशी ने उत्तर दिया।

"यह कौन बड़ी बात है, भैया? मेरे बंधन खुलवा कर तुम मेरी जगह खड़े हो

जाओ। मैं तुम को खंभे से बांध दूँगी और तुम्हारे मुँह पर एक बुरखा डाल दूँगी। थोड़ी देर बाद राजभट रोटियाँ ले आ जायेंगे, तुम को देख समझेंगे कि मैं ही खंभे पर बंधी हूँ। इसलिए तुम से ज़बर्दस्ती शहद की रोटियाँ खिलायेंगे।" दिलैला ने कहा।

दिलैला की बातों पर यक़ीन करके परदेशी ने उसके बंधन खोल दिये। दिलैला ने परदेशी को खंभे से बांध दिया और चेहरे पर बुरखा डाल परदेशी के घोड़े पर सवार हो बगदाद नगर में चल पड़ी।

सवेरा होते ही पाँचों फ़रियादी नींद से जाग उठे। यह सोच कर उसे गालियाँ देना शुरू किया कि दिलैला ही खंभे से बंधी हुई है। थोड़ी देर तक परदेशी उनकी गालियाँ सुनता रहा, तब पूछा— "अभी तक शहद की रोटियाँ क्यों न लायी गयीं?"

परदेशी का कंठ सुनकर पाँचों फ़रियादी अचरज में आ गये। उसके चेहरे पर का बुरखा हटाकर देखा। अब उनकी समझ में आया कि दिलैला एक बार और उनकी आँखों में धूल झोंककर चली गयी।

थोड़ी देर बाद खालिद खुद वहाँ आ पहुँचा। उसे दिलैला की दगाबाज़ी का पता चला। उसे लगा कि वह दिलैला को उचित दण्ड नहीं दिला सकेगा! इसलिए वह सब फ़रियादियों को साथ ले सीधे खलीफ़ा के पास जा पहुँचा।

खलीफ़ा हारूनल रषीद ने सारी बातें सुनकर वचन दिया कि जिन जिन को जो नुक़सान पहुँचा है, वह खुद नुक़सान भर देगा। फिर भी दिलैला को बंदी बनाना ज़रूरी था, इसलिए उसे बंदी बनाने का भार खलीफ़ा ने खालिद और मुस्तफ़ा पर डाल दिया।

"मैं दिलैला को पकड़ न सकूंगा।" खालिद ने खलीफ़ा से साफ़ कह दिया।

"तब तो किसी दूसरे का नाम तुम्हीं बताओ, जो उसे क़ैद कर सके?" खलीफ़ा ने पूछा।

"नये कोत्वाल अहमद के रहते किसी दूसरे की क्या जरूरत है? जब से वह कोत्वाल के पद पर नियुक्त हुआ है, तब से उसने किसी चोर को क़ैद नहीं किया है। इसलिए दिलैला को शायद वही पकड़ सकता है।" खालिद ने कहा।

खलीफ़ा ने अहमद को बुलवा कर उसे दिलैला की सारी कहानी सुनायी और उसे क़ैद करने का आदेश दिया।

अहमद उसी क्षण अपने चालीस भटों के साथ दिलैला को बन्दी बनाने चल पड़ा। उन चालीस भटों का जमेदार गूनी अली था। उसने अपने अफ़सर अहमद से कहा—"हुज़ूर, मेरे ख्याल में दिलैला को पकड़ने में हसन साहब की भी मदद ले तो अच्छा होगा।"

"अरे कमबख्त! हमें किसी और की मदद की क्या जरूरत है? क्या हम ऐसे नालायक़ हैं? फिर कभी ऐसी बात मुँह से निकालागे तो तुम्हारी हड्डी-फ़सली तोड़ दूंगा। खबरदार!" अहमद ने ऊँचे स्वर में इस तरह कहा जिससे वे बातें हसन के कानों में पड़े।
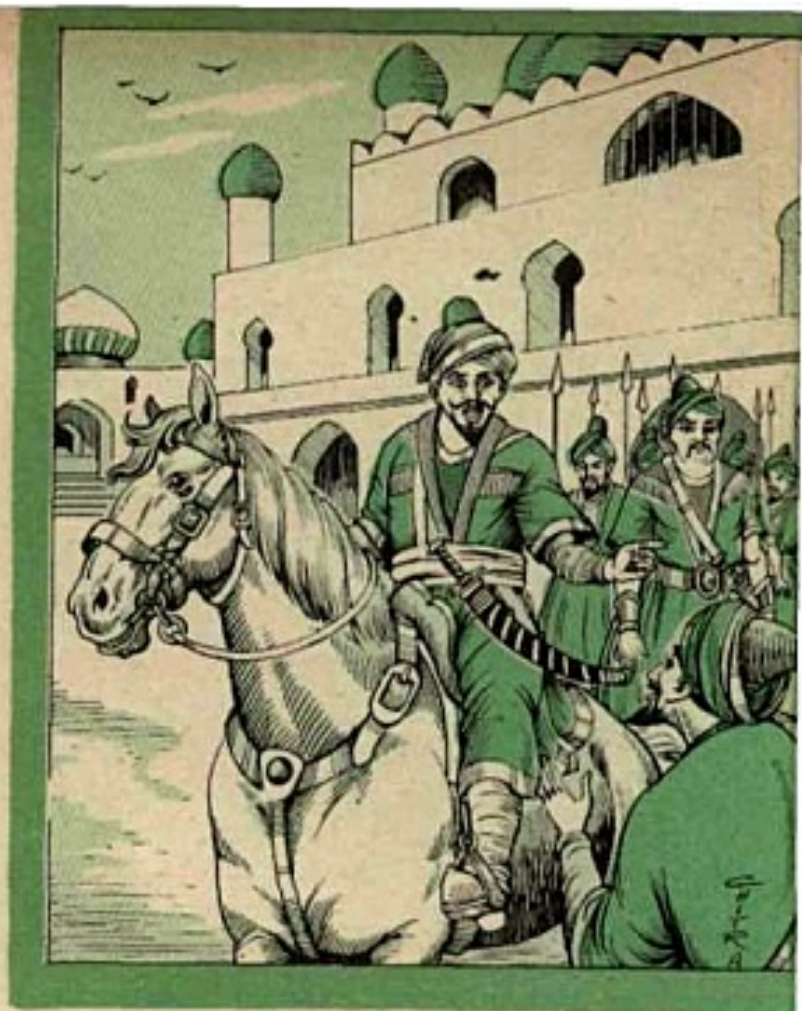
दिलैला को बन्दी बनाने में खलीफ़ा ने अहमद को नियुक्त किया था, इस पर हसन बड़ा हताश हो गया था। उल्टे अहमद की डींग सुनकर उसका दिल और बैठ गया। उसने अपने मन में सोचा—"मेरी मदद के बिना अहमद दिलैला को कैसे क़ैद कर सकेगा? मैं भी तो देखूँ?"

अहमद अपने चालीस भटों को राजमहल के बाहर मैदान में ले आया और बोला—"मेरे नौजवान वीर साथियो, तुम लोगों

बना सकता है तो वह केवल हसन ही है। खलीफ़ा ने उसे हमें पकड़ने के लिए नियुक्त नहीं किया, यह हमारी खुशक़िस्मती है। अब रही, अहमद की बात? उसे तो तुम भी बड़ी आसानी से धोखा दे सकती हो!"

"माँ, तब क्या मैं खुद जाकर उन्हें नाकों दम करके लौट आऊँ?" जीनाब ने अपनी माँ से पूछा।

"अच्छी बात है, बेटी। हो आओ!" दिलैला ने अनुमति दी।

जीनाब ने अपने को बड़े अच्छे ढंग से सजाया। बड़ी ही पतली रेशमी घूँघट डाले मुस्तफ़ा की गली में हजकरीम द्वारा चलायी जानेवाली सराय में चली गयी। उसने हजकरीम को झुककर बड़ी अदब से दो बार सलाम किया और कहा-"मेरे कुछ दोस्त आ रहे हैं। वे लोग किसी तरह की गड़बड़ी किये बिना अपना विनोद करेंगे। इसलिए सब से बड़ा कमरा एक दिन के लिए किराये पर दे दीजिये। मैं पाँच दीनार किराया दूँगी।"

हजकरीम उस युवती की खूबसूरती देख बोला-"मुझे किराये की जरूरत नहीं, आनेवाले अतिथि मेरी शराब खरीद ले तो मुझे खुशी होगी।"

को मैं चार दलों में बांट देता हूँ। तुम लोग शहर के चार मुहल्लों में जाकर खूब छान-बीन करो। कल दुपहर तक तुम सब मुस्तफ़ा गली की नुक्कड़वाली सराय में आ मिलो। मैं वहाँ पहुँचकर तुम लोगों के अनुभव सुनूंगा।"

अहमद का आदेश पाकर चार दल चार दिशाओं में निकल पड़े। अहमद भी खुद चोर का पता लगाने चल पड़ा।

दिलैला को जब मालूम हुआ कि उसे क़ैद करने खलीफ़ा ने अहमद को नियुक्त किया है, इसकी उसने जरा भी परवाह न की। उसने अपनी बेटी से कहा-"मुझे अगर कोई बंदी

"ओह, इस बात की कोई कमी न होगी! मेरे सभी दोस्त जी भरकर पीनेवाले हैं।" जीनाब ने जवाब दिया।

जीनाब ने अपने घर से कालीन, तकिये, मेज़, थालियाँ तथा अन्य सामान मँगवाया। सराय के बड़े कमरे में सबको सजाकर खान-पान का अच्छा इंतज़ाम कराया। तब वह सराय के मुख द्वार पर जा खड़ी हो गयी।

जीनाब ने गूनी अली को देख पूछा– "क्या आप ही अहमद हैं?"

"नहीं, नहीं, मुझे तो लोग गूनी अली कहते हैं।" मुस्कुराते अली ने जवाब दिया।

"तब तो आप सब मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिये।" ये शब्द कहते जीनाब उन्हें बड़े कमरे में ले गयी।

पहले दल के उन दस लोगों ने शराब के पीपे को घेरकर पीना शुरू किया। उसमें जीनाब ने भांग मिला रखा था। इसलिए कुछ ही क्षणों में सब लोग होश खो बैठे।

जीनाब एक एक करके सभी भटों को पैर पकड़कर पिछवाड़े में खींच ले गयी, एक पर एक को इस तरह डाल दिया, जैसे लकड़ी करीने से सजायी जाती है। अंत में उन पर एक कपड़ा ओढ़ दिया।

कमरा साफ़ करके फिर मुख द्वार के पास जाकर खड़ी हो गयी।

थोड़ी देर बाद एक दूसरे दल के दस भट आ पहुँचे। उन्हें भी भीतर ले जाकर जीनाब ने शराब पिलायी और बेहोश कर दिया। उन्हें भी पिछवाड़े में खींच ले जाकर उन पर कपड़ा ओढ़ दिया।

जब अहमद के चालीस भटों का यह हाल हो गया, तब अहमद भी घोड़े पर वहाँ आ पहुँचा। उसने दर्वाज़े पर खड़ी जीनाब को देख पूछा–"क्यों री लड़की? क्या मेरे भट यहाँ पर नहीं आये?"

"ओह, आप कोत्वाल अहमद साहब हैं न? तब तो सुनिये! आपके भटों को इस गली के नुक्कड़ में कोई बूढ़ी दिखायी दी, उन लोगों ने आप से यह बताने को कहा कि वे उस औरत को क़ैद करने गये हैं। तब तक आप भीतर आकर मेरे अतिथ्य को स्वीकार कीजिये।"

अहमद ने बड़ी खुशी से मान लिया। भीतर जाकर शराब पीने लगा। थोड़ी ही देर में वह भी बेहोश हो गया। जीनाब ने उसके क़ीमती वस्त्र उतार दिये। तब पिछवाड़े में बेहोश पड़े चालीस भटों की पोशाकें व गहने उतार दिये। अहमद के घोड़े पर सवार हो सीधे घर चली गयी।

कोत्वाल अहमद तथा उसके भट दो दिन और दो रात बेहोशी की नींद सो गये। तीसरे दिन सवेरे जाग पड़े। बड़ी देर तक उन्हें पता तक न चला कि वे कहाँ पर हैं। पर धीरे धीरे उन्हें मालूम हुआ कि कैसे वे एक युवती के हाथों में धोखा खा चुके हैं। इस पर उन्हें बड़ी लज्जा हुई। सब लोगों के शरीर पर जंगियाँ मात्र रह गयी थीं, बाहर जाना अपमान की बात थी, फिर भी उन्हें जाना पड़ा। केवल बनियन तथा जंगियों से ही अहमद और उसके भट गली में घुस पड़े। (और है)

साहसी योद्धा

धरनीकोट में एक कुलीन क्षत्रिय था। उसका नाम शूरवर्मा था। उसके एक सुन्दर कन्या थी। उसका नाम मालिनी था। मालिनी न केवल रूपवती थी, बल्कि वह अपार संपत्ति की वारिस थी। इसलिए उसके साथ विवाह करने के लिए अनेक युवक प्रयत्न करने लगे। लेकिन वे अपने प्रयत्नों में सफल न हुए। क्योंकि शूरवर्मा ने निर्णय किया था कि वह अपनी पुत्री का विवाह साहसी योद्धा के साथ ही करेगा।

उसी शहर में एक युवक था। मालिनी जैसे वह भी सुन्दर था। उसका नाम कीर्तिसिंह था। उसके दादा-परदादाओं ने कई राज्यों पर शासन किये थे, लेकिन वह इस वक़्त ग़रीब था। उसके पास संपत्ति के नाम पर केवल एक तलवार और एक सफ़ेद घोड़ा था। इसलिए वह फौज़ में भर्ती होकर अपना पेट पालता था। वह असाधारण साहसी और हिम्मतवर था। मगर उसे अपनी वीरता प्रदर्शित करने का मौक़ा नहीं मिला था।

एक दिन कीर्तिसिंह बड़ी दूर की यात्रा करके शहर में लौट रहा था। शहर के बाहर शूरवर्मा के सुंदर महल को देख उसने अपने घोड़े को रोक दिया। धूप में यात्रा करने के कारण उसे बड़ी प्यास लगी थी। वह यह सोच कर महल के पास पहुँचा कि शायद उसे और उसके घोड़े को पीने का पानी मिल जाय।

महल के सामने सुंदर पेड़ और पौधों से भरा एक उद्यान था। पेड़ों के बीच कमल पुष्पों से भरा एक तालाब था। उस तालाब के किनारे मालिनी बैठी थी। आहट पाकर उसने कीर्तिसिंह की ओर सर उठाकर देखा और पूछा—"आप कौन हैं? आपको क्या चाहिये?"

यदुनाथ गोस्वामी

मालिनी का सौंदर्य देख कीर्तिसिंह चकित रह गया। वास्तव में उसके सौंदर्य को भी देख मालिनी भी विस्मय में आ गयी थी।

"मैं बड़ी दूर से धूप में यात्रा करके लौट रहा हूँ, मैं और मेरे घोड़े हम दोनों प्यासे हैं। क्या हमें पानी पिला सकती हैं?" कीर्तिसिंह ने पूछा।

मालिनी ने तालियाँ बजायी। तुरंत एक सेवक आ खड़ा हुआ।

"इनको पीने के लिए पानी ले आओ। बाद घोड़े को ले जाकर पानी पिलाओ।" मालिनी ने सेवक को आदेश दिया।

सेवक ने तुरंत पानी लाकर कीर्तिसिंह को दिया, तब घोड़े को पानी पिलाने ले गया।

प्यास बुझाने पर कीर्तिसिंह की थकावट दूर हो गयी। उसने चारों तरफ़ नजर दौड़ा कर मालिनी से कहा-"वाह, यह कैसा सुंदर उद्यान है? यहाँ रहते आप क्यों दुखी मालूम होती हैं?"

"मेरे दुख का कारण भी तो है। मुझे लगता है कि इस जिंदगी में मेरा विवाह न होगा। मेरे पिताजी का निर्णय है कि वे एक साहसी योद्धा के साथ ही मेरा विवाह करनेवाले हैं। यदि कोई भीम या अर्जुन जिंदा हो तो मेरा विवाह होगा, वरना नहीं।" मालिनी ने अपने मन की व्यथा प्रकट करते उत्तर दिया।

"तब तो मुझ जैसे व्यक्ति को वह भाग्य न होगा। मैं साधारण सैनिक हूँ। हमारा वंश तो बड़ा है, लेकिन मेरी संपत्ति केवल यह तलवार और घोड़ा है। मैं साहस तो रखता हूँ, मगर अभी तक किसी पर उसे प्रकट करने का अवसर मुझे नहीं मिला। न मालूम उस अवसर के प्राप्त होने पर मेरी अवस्था कितने साल की होगी?" कीर्तिसिंह ने कहा।

"मुझे सुख प्रदान करने के लिए आप जैसे व्यक्ति पर्याप्त हैं। किंतु मेरे पिता को

संतुष्ट करने के लिए आप जैसे व्यक्ति किसी काम के न होंगे।" मालिनी ने कहा।

वे दोनों बात कर ही रहे थे कि सेवक घोड़े को पानी पिला कर ले आया।

"अब आप चले जाइये। अपरिचितों के साथ मेरे बात करने पर पिताजी नाराज़ हो जायेंगे।" मालिनी ने समझाया।

कीर्तिसिंह अपने घोड़े पर घर लौटा। लेकिन वह चाहते हुए भी मालिनी को भूल न सका। अगर मालिनी को स्वेच्छा होती तो वह उसके साथ अवश्य शादी करती। इस विश्वास ने कीर्तिसिंह के मन को और दुखाया। वह पहाड़ों में घूमने जाता और यही बात सोचा करता।

एक दिन वह पहाड़ों में घूम ही रहा था कि उसे एक जगह एक झोंपड़ी तथा उसके सामने एक बूढ़ी दिखाई दी। उसने कीर्तिसिंह को चिंता में पड़े देख पूछा—"क्यों बेटा? किसलिए तुम दुखी हो?"

कीर्तिसिंह को लगा कि उसके मन की बात बुढ़िया से कह देनी चाहिये।

कीर्तिसिंह की सारी कहानी सुनकर बुढ़िया झोंपड़ी के अन्दर चली गयी। थोड़ी देर बाद एक डिबिया लेकर बाहर आयी।

"इस डिबिया में एक छोटी मकड़ी है। इसे ज़मीन पर गिरा दोगे तो मंत्र के प्रभाव से यह एक महासर्प के रूप में बदल जायगा। उसे तुम मार डालोगे तो एक साहसी योद्धा की ख्याति पाओगे। कोशिश करके देखो, शायद इसकी मदद से तुम्हारी इच्छा की पूर्ति हो जाय।" ये शब्द कहते बुढ़िया ने डिबिया कीर्तिसिंह के हाथ दे दी।

दूसरे दिन कीर्तिसिंह उस डिबिया को अपने कपड़ों में छिपा कर शूरवर्मा के घर पहुँचा। शूरवर्मा ने उसका स्वागत करके पूछा—"तुम किस काम से आये हो?"

"मैं एक अच्छे वंश का क्षत्रिय युवक हूँ। मेरे दादा-परदादों ने राज्य किये हैं। दुर्भाग्य से मैं एक मामूली सैनिक मात्र बना हुआ हूँ। मैं ग़रीब हूँ। फिर भी आपकी पुत्री के साथ विवाह करने की मेरी इच्छा हो रही है। यह बात आप से निवेदन करने आया हूँ।" कीर्तिसिंह ने कहा।

शूरवर्मा ने कीर्तिसिंह की ओर आपाद मस्तक देख पूछा—"तुम अपनी बीरता और पराक्रम की बातें मुझे सुनाओ। अन्य बातों से मेरा कोई मतलब नहीं है।"

"मैं एक नया सैनिक हूँ। एक-दो छोटी-मोटी लड़ाइयों में मैंने भाग लिया है। बड़ी लड़ाइयों में भाग लेने का मुझे अभी तक मौक़ा नहीं मिला है। लेकिन मौक़ा मिले, तो मैं अपने साहस का परिचय दे सकता हूँ।" कीर्तिसिंह ने कहा।

"असाधारण साहसी कृत्य करने के बाद मुझसे मिलो। अब तुम जा सकते हो।" शूरवर्मा ने जवाब दिया।

कीर्तिसिंह सर झुकाकर लौटते हुए बाहर आया। अपनी डिबिया खोल मकड़ी को नीचे गिराया। दूसरे ही क्षण बाहर से बड़ा कोलाहल और हाहाकार सुनायी दिये। सब लोग दौड़कर बाहर पहुँचे। शूरवर्मा भी भाग गया।

बाहर एक महा सर्प फुफकारते बीभत्स बनाये हुए था।

"अरे, तुम सब देखते क्या हो? उसे मार डालो।" शूरवर्मा चिल्ला पड़ा। मगर कोई हिला तक नहीं, बल्कि दूर भाग गये।

"सरकार, उस महा सर्प को मारना मामूली बात नहीं है?" नौकरों ने कहा।

"ठहरो, उसकी बात मैं देख लेता हूँ।" ये शब्द कहकर कीर्तिसिंह ने म्यान से तलवार खींची और साँप के निकट पहुँचा। साँप कीर्तिसिंह को अपनी पूंछ से मारने

का प्रयत्न करने लगा। कीर्तिसिंह उछलकर उसकी पूंछ को तलवार से काटने की कोशिश करने लगा। लेकिन साँप तलवार की वार को बचाकर उस पर आक्रमण करने लगा।

उस महा सर्प और कीर्तिसिंह के बीच बड़ी देर तक संघर्ष होने लगा। वह सर्प कीर्तिसिंह को पूँछ से मारने, अपने शरीर में लपेटने तथा उसे काटने का अनेक प्रकार से प्रयत्न करने लगा। पर कीर्तिसिंह बड़ी चालाकी से उसके प्रयत्नों को बेकार साबित करता गया। साँप भी कीर्तिसिंह की तलवार की वारों से अपने को बचाता रहा। मगर अंत में कीर्तिसिंह ने साँप की पूंछ को काट डाला। इसके बाद साँप पर वार करके उसे कमज़ोर बनाया और अपनी तलवार से उसे मार डाला।

इस भयंकर युद्ध को देखनेवालों के शरीर पसीने से लतपथ हो गये। शूरवर्मा के चेहरे पर खुशी की लहरें दौड़ गयीं। उसने कीर्तिसिंह के निकट पहुँचकर उसके कंधे पर थपथपाते कहा—"शाबाश! तुम सचमुच साहसी योद्धा हो!" इसके बाद नौकरों को बुलाकर उन्हें आदेश दिया—"इसे खूब नहलाकर नये वस्त्र पहना दो, तब पुरोहित को बुला लाओ।"

इसके बाद मालिनी तथा कीर्तिसिंह का विवाह वैभव के साथ संपन्न हुआ। कुछ दिन बाद कीर्तिसिंह एक थैली और एक छोटी डिबिया लेकर पहाड़ों में गया। बुढ़िया से मिलकर बोला—"बूढ़ी माँ! लो तुम्हारा पुरस्कार! यह तुम्हारी डिबिया है।"

बूढ़ी ने थैली खोलकर देखा, उसमें सोना भरा हुआ था। डिबिया खोलकर देखा तो उसमें मकड़ी थी। उसने दिल खोलकर कीर्तिसिंह को आशीर्वाद दिया—"बेटा! हज़ार वर्ष जिओ!"

धोखेबाज

एक गाँव में एक अमीर था। वह भोले लोगों को धोखा देकर खूब धन कमाता था।

उसी गाँव में एक धोखेबाज था। वह अमीरों को दगा देकर पेट भरता था। उसके मन में उस अमीर को दगा देने की इच्छा हुई। एक दिन वह अमीर के यहाँ एक गहना गिरवी रख कर सौ रुपये उधार लाया। चार दिन बाद अमीर को रुपये लौटते हुये बोला–"आपको मैंने नाहक़ कष्ट दिया। आपके रुपयों की जरूरत न पड़ी।" अमीर ने रुपये गिन कर देखा तो बीस रुपये ज्यादा थे।

"ब्याज में तुमने बीस रुपये दिये। क्या मुझे तुम पक्का लोभी समझते हो?" अमीर ने पूछा।

"जी नहीं, मैंने आप के रुपये ही लौटाये हैं। शायद उन रुपयों ने बच्चे दिये हों।" धोखेबाज ने कहा। अमीर ने वे रुपये लेकर उसका गहना वापस किया।

कुछ दिन बीत गये। धोखेबाज ने अपनी बेटी की शादी का बहाना करके अमीर से एक हजार रुपये माँगा और पाँच महीने में चुकाने का वादा किया। अमीर ने धोखेबाज को एक हजार रुपये दिये।

पाँच महीने बीत गये। छठवाँ महीना भी बीता। इसपर अमीर ने धोखेबाज को बुलाकर अपने रुपये माँगा। "हुजूर! क्या बताऊँ? मेरी लड़की की शादी होने के पहले ही आप के रुपये मर गये। मैंने उनका दहन भी किया है। समझ में नहीं आता कि लड़की की शादी कैसे करूँ?" चिंता प्रकट करते जवाब दिया। अमीर ने गुस्से में आकर कहा–"कहीं रुपये भी मर जाते हैं? यह सब धोखा है!"

"हुजूर, जो रुपये बच्चे देते हैं, वे मर भी जाते हैं। चाहे तो आप किसी से पूछ लीजिये।" धोखेबाज ने उत्तर दिया।

आईना

बात बहुत पुरानी है। एक छोटे गाँव में वांग नामक एक युवक था। उस गाँव के समीप में कोई सड़क तक न थी। गाँव के क़रीब क़रीब सब लोग भोले थे। उनमें अव्वल दर्जे का भोला वांग था।

एक बार वांग कोयले की काँवरी ले शहर की ओर चल पड़ा। वहाँ पर कोयले की बड़ी माँग भी। वांग कभी गाँव से बाहर न गया था।

वांग की पत्नी गाँव के छोर तक साथ आयी, अपने पति को विदा करते बोली– "कुशल से जाओ, लाभ के साथ लौटो! लौटते समय मेरे लिए एक कंघी लेते आओ।"

"कंघी?" वांग ने आश्चर्य के साथ पूछा। उसने कभी कंघी का नाम तक न सुना था। उन दिनों में चीन की औरतें लकड़ी की कंघी बालों में रखती थीं, वे कंघियाँ हँसिये की तरह टेढ़ी होती थीं।

"लो देखो, ठीक ऐसे होती है।" वांग की पत्नी ने आसमान में चमकनेवाले अर्धचन्द्र की ओर हाथ दिखाया।

रास्ते में वांग को हर चीज़ विचित्र मालूम होने लगी। बड़ी तक़लीफ़ उठाकर आखिर वांग शहर में पहुँचा। उसका कोयला अच्छे दाम पर बिक गया।

उस दिन शाम को वह शहर की भीड़ में चल रहा था, उसे अचानक अपनी पत्नी की माँगी चीज़ याद आयी। लेकिन उस चीज़ का नाम भूल गया था। उसकी आकृति आसमान में होगी, यह सोचकर वांग ने आसमान की ओर देखा। वहाँ पर पूर्ण चन्द्रमा दिखायी दिया। वह यह सोचते आगे बढ़ा कि उसकी पत्नी के लिए कोई गोल वस्तु ले जाय। उसे एक दूकान में कोई गोल वस्तु दिखायी दी। तुरंत वांग दूकान के भीतर गया। उस चीज को खरीद कर घर की ओर लौटा।

लौटती यात्रा में भी काफ़ी दिन लगे। फिर भी वांग सकुशल घर लौट आया। वह गोल वस्तु अपनी पत्नी को दी। वह एक आईना था।

वांग की पत्नी ने बड़ी आतुरता से कपड़ा खोल आईना बाहर निकाला। उस में उसे उसका प्रतिबिंब दिखाई पड़ा। वह आईने से बिलकुल अपरिचित थी। उस गाँव के किसी ने भी इसके पहले आईना नहीं देखा था। इसलिए वांग की पत्नी ने सोचा कि उसका पति शहर से एक और पत्नी को साथ लाया है।

वांग की पत्नी उस आईने को ले उसी गाँव में स्थित अपने माइके रोते हुये चली गयी। अपनी माँ के हाथ आईना देते बोली—"देखो माँ, तुम्हारा दामाद शहर जाकर एक और पत्नी को लाया है।"

उसकी माँ ने आईने में अपना प्रतिबिंब देख सोचा कि उसका दामाद अगर दूसरी पत्नी को लाना चाहता था तो युवती को न लाकर बूढ़ी को क्यों ले आया है। वहाँ पर भीड़ इकट्ठी हो गयी। सब ने सलाह दी कि गाँव के मुखिये से फ़रियाद करनी है। मुखिये ने वांग, उसकी पत्नी तथा उसकी सास को बुलवाकर आईने में देखा। उसमें एक और मुखिया दिखाई पड़ा।

"अरे, तुम लोग मेरे बदले एक और मुखिये को लाये हो? ठहरो, तुम लोगों का घमण्ड तोड़ दूँगा।" यह कहते उसने भटों को आदेश दिया कि फ़रियादी तथा मुद्दई को कोड़े लगा दे।

इस अन्याय को देख सब लोग ठहाके लगा हँस पड़े। सबने यह सोचकर आईने पकड़कर खींचा कि मुखिया झूठ बोल रहा है।

इस छीना-झपटी में आईना नीचे गिर कर टुकड़े-टुकड़े हो गया। इस से सब की तक़लीफ़ें अपने आप दूर हो गयीं।

महाभारत

दक्षिणी समुद्र के तीर पर सौभद्र नामक एक तीर्थ था। अर्जुन उसमें स्नान करने की तैयारी कर रहा था; तब वहाँ के ब्राह्मणों ने उसे रोककर यों बताया :

इस प्रदेश में सौभद्र तीर्थ के साथ पौलोम, कारंडव, प्रसन्न और भारद्वाज नामक तीर्थ भी हैं। एक सौ वर्षों से कोई भी व्यक्ति इन पाँच तीर्थों में स्नान नहीं कर रहा है। यों तो ये पुण्य तीर्थ ही हैं, पर इनमें मगर-मच्छ आ गये हैं। इसलिए इन तीर्थों में उतरना खतरे से खाली नहीं है।

यह समाचार सुनने पर अर्जुन ने सोचा कि मगर-मच्छों की खबर सुनकर सौभद्र तीर्थ में स्नान न करना कायरता कहलायगी। उसने अब तक अपने मार्ग में जितने भी तीर्थ पड़े, उन सब का सेवन किया था, इसलिए बिना संकोच के वह सौभद्र तीर्थ में उतर पड़ा।

पानी के हिलोरों का पता लगाकर उस तीर्थ के सबसे बड़े मगर-मच्छ ने आकर अर्जुन का पैर पकड़ लिया। अर्जुन उसे किनारे तक खींच लाया और पानी में से उसे बालू पर फेंक दिया।

तुरंत ही उसके मगर-मच्छ का रूप जाता रहा और वह एक सुंदर नारी के रूप में बदल गया। यह परिवर्तन देख वहाँ के ब्राह्मणों के साथ अर्जुन भी चकित रह गया और उसने पूछा—"हे सुंदरी, तुम कौन हो? किस कारण से तुम मगर-मच्छ

१८. द्वारका में अर्जुन

का रूप धरकर इस सरोवर में रहती हो? तुम्हारा वह रूप कैसे बदल गया?"

इस पर उस नारी ने अर्जुन से कहा– "मैं एक अप्सरा हूँ। मेरा नाम वर्ग है। सौरभेई, समीची, बसा और लता नामक मेरी चार सखियाँ शाप के कारण मेरे जैसे मगर-मच्छ बन गयी हैं। इसलिए तुम मेरी ही भांति उनको भी शाप से मुक्त कर पुण्य का संपादन करो।"

"तुम पाँचों को यह भयंकर शाप कैसे प्राप्त हुआ?" अर्जुन ने वर्ग से पूछा। इस पर वर्ग ने अपनी कहानी यों सुनायी:

"हम पाँचों कन्याएँ दिकपालकों के नगर देखने चल पड़ीं। उन नगरों को देखते-देखते भूलोक में आ पहुँचीं। एक जंगल में एक ब्राह्मण तपस्या करते हमें दिखाई पड़ा। वह देखने में बड़ा सुंदर था। वह अग्निहोत्र की भांति तेजोवान था। उसकी तपस्या का भंग करने की हमारे मन में दुर्बुद्धि पैदा हुई। हमने उसके सामने उद्रेक पैदा करनेवाली बातें कीं। उसे मोहित करने के लिए हमने तरह-तरह के गीत गाये, नृत्य भी किये। फिर भी वह विचलित न हुआ। उसने हमें तृण के बराबर माना। उसके मन में कामवासना

जगाने के काम किये, इस पर वह क्रोध में आया। उसने हमें मगर-मच्छ बन जाने का शाप दिया। हमने उनके चरणों पर गिरकर बिनती की कि नारियों पर क्रोध करना अन्याय है। इस प्रकार के शाप के शिकार होने के बदले मर जाना कहीं अच्छा है। तब उसने शांत होकर बताया– "तुम लोगों को सौ साल मगर-मच्छों की ज़िंदगी बितानी ही पड़ेगी। इसके बाद जो कोई भी व्यक्ति तुम लोगों को पकड़कर किनारे फेंक देगा तो तुम्हारा शाप जाता रहेगा। उस दिन से लेकर हम पाँचों कन्याएँ पाँच तीर्थों में मगर-मच्छों के रूप में रह रही हैं। आज तुम्हारी कृपा से मेरा शाप जाता रहा। मेरे साथ शेष चार तीर्थों में भी जाकर मेरी सहेलियों को शाप से मुक्त करके इन तीर्थों को पवित्र बनाओ।"

अप्सरा की इच्छा के अनुसार अर्जुन ने बाक़ी चार तीर्थों में भी उतरकर वहाँ की अप्सराओं को शाप से मुक्त किया। इसके बाद वे पाँचों तीर्थ "नारी तीर्थ" नाम से मशहूर हो गये।

अर्जुन वहाँ से फिर मणिपुर को लौट आया। चित्रांगदा के साथ सुखपूर्वक रहने

लगा। कुछ महीनों के बाद चित्रांगदा के बभ्रुवाहन नामक एक पुत्र हुआ। उस लड़के को अर्जुन ने चित्रांगदा के पिता को सौंप दिया, फिर वहाँ से पास में स्थित प्रभास तीर्थ को गया। उसमें स्नान किया। उस रात को थोड़ी वर्षा होने लगी, फिर भी अर्जुन एक बरगद के नीचे लेट गया।

वहाँ पर अर्जुन की गद नामक एक यादव से भेंट हुई। उसने कृष्ण की बहन सुभद्रा के सौंदर्य का विस्तार पूर्वक वर्णन किया। अर्जुन ने इसके पहले ही सुन रखा था कि सुभद्रा तिलोत्तमा से बढ़कर रूपवती है। इसलिए उसके मन में अब

यह इच्छा पैदा हुई कि सुभद्रा को किसी भी तरह प्राप्त कर लेना चाहिए। प्रभास तीर्थ से द्वारका नगर निकट ही था। उसने सोचा कि द्वारका जाने पर कृष्ण से मुलाक़ात होगी।

यादव यति लोगों से बड़ी भक्ति रखते थे। इस कारण अर्जुन ने यति का वेष धारणकर द्वारका जाने का निश्चय किया। इस बीच में तीर्थयात्राऐं करते अर्जुन के प्रभास तीर्थ पहुँचने का समाचार गुप्तचरों के ज़रिये द्वारका नगर को मिला। कृष्ण उनको देखने के ख्याल से प्रभास तीर्थ में आया और अर्जुन से पूछा—"अर्जुन, तुमने अपना वेष बदल क्यों दिया है? इस का कोई कारण होगा न?"

अर्जुन ने अपने मन की बात कृष्ण से बता दी। कृष्ण ने उसकी बात मान ली और उसे रैवतकाद्रि पर रखने का निर्णय कर अपने साथ ले आया। वहाँ पर कृष्ण और अर्जुन ने एक दिन और एक रात वार्तालाप करते बिता दी। बढ़िया भोजन किया। नृत्य और गानों का विनोद देखा। दूसरे दिन सवेरे कृष्ण अर्जुन के लिए रैवतकाद्रि पर समस्त प्रकार की सुविधाऐं करके द्वारका चला गया।

इसके कुछ दिन बाद यादवों ने रैवतकाद्रि पर एक बहुत बड़ा उत्सव मनाया। उस उत्सव को देखने के लिए द्वारका से वसुदेव, उग्रसेन, अक्रूर, बलराम, कृष्ण, प्रद्युम्न इत्यादि यादव तथा देवकीदेवी, रेवती, रुक्मिणी, सत्यभामा, जांबवती वगैरह अंत:पुर की नारियाँ, सुभद्रा वगैरह कन्यायें भी आ पहुँचीं। उन लोगों में घूमनेवाली रूपवती को देख अर्जुन उस पर मोहित हुआ। उत्सव के समाप्त होते ही सब लोग द्वारका को लौट गये।

कृष्ण की अनुमति लेकर अर्जुन रैवतकाद्रि को छोड़ द्वारका के समीप में स्थित एक
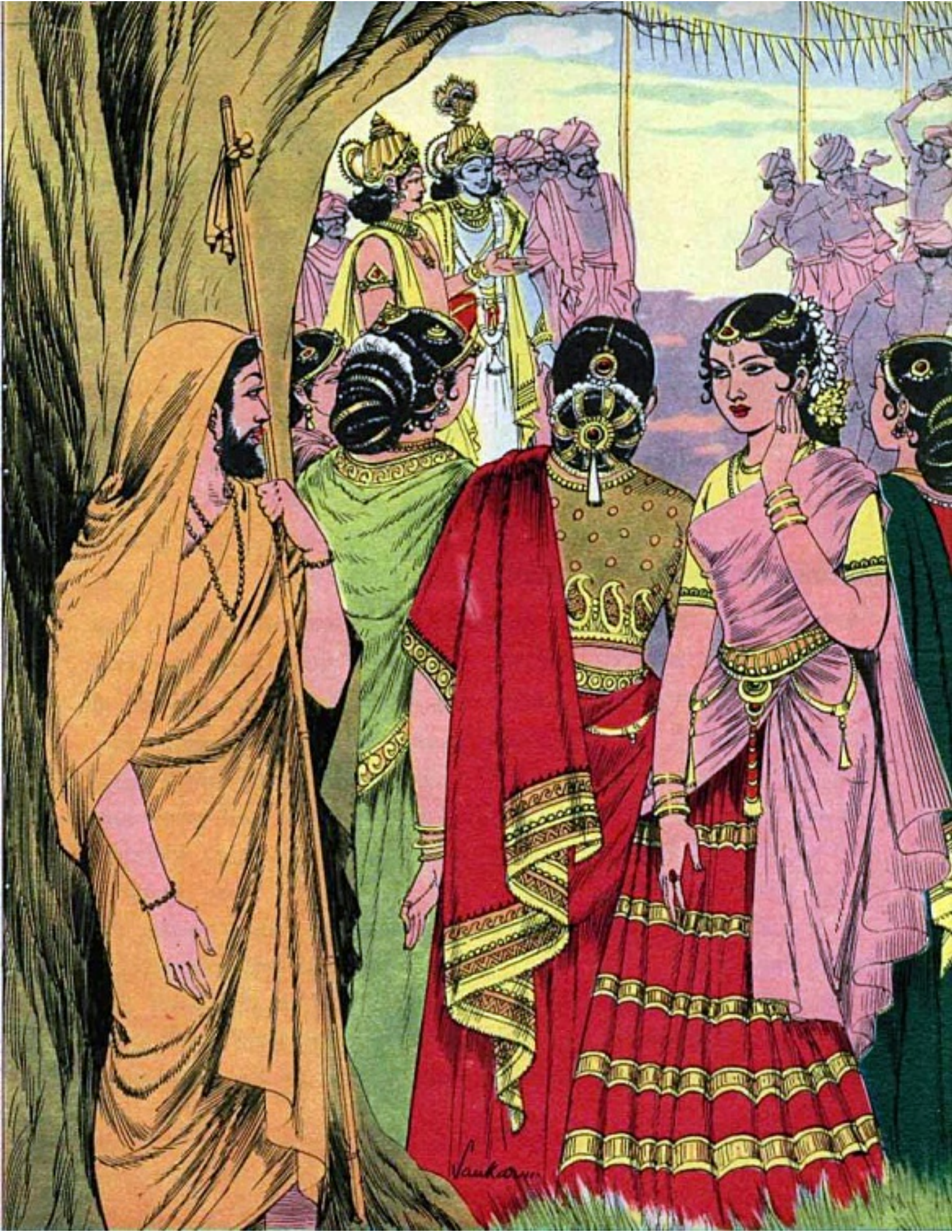
उद्यान में पहुँचा। बलराम आदि यादव विहार करने उधर आ निकले, अर्जुन को देख उन्हें यह न मालूम होने के कारण कि वह कपट यति है, उसे सबने प्रणाम किया और भक्तिभाव से पूछा–"आप ने कौन-कौन से पुण्य तीर्थ देखे? किन तीर्थों में गये? यहाँ पर कितने दिन रहेंगे?" अर्जुन ने उन्हें उचित उत्तर दिया और कहा– "मैं बरसात के चार महीने यहीं पर बिताना चाहता हूँ।"

यह बात सुनकर बलराम बहुत प्रसन्न हुआ और अपने भाई कृष्ण से कहा–"इस यति के लिए सुभद्रा के निवास के समीप में स्थित उद्यान में ठहरने का प्रबंध करेंगे। तुम्हारा क्या विचार है?"

"यह यति देखने में सुंदर है। हमारी सुभद्रा भी रूपवती है। इसलिए मेरा डर है कि आखिर इसका क्या परिणाम होगा?" कृष्ण ने उत्तर दिया।

"इस तरह शंका करना ठीक नहीं। मेरे विचार में इस यति के लिए सुभद्रा का निवास ही उचित होगा।" बलराम ने कहा।

कृष्ण ने ऐसा अभिनय किया, मानों वह अपने भाई के विचार को विवश होकर मान रहा हो! इसके बाद अर्जुन को सुभद्रा के निवास में पहुँचवा दिया और असली बात केवल रुक्मिणी और सत्यभामा को बतायी। तदनंतर उसने सुभद्रा से कहा– "बहन, हमारे देश में अतिथि बनकर जो यति आये हुए हैं, उनको तुम्हारे उद्यान में ठहराया है। तुम उसकी सेवा-शुश्रूषा करो। उसके भोजन, स्नान इत्यादि में असावधानी न हो। यतियों की सेवा करके यादव कन्याएँ अनेक उपकार पा चुकी हैं।"

कृष्ण के कहे मुताबिक़ सुभद्रा अर्जुन की सब तरह की सेवाएँ करती आयीं। सुभद्रा के सौंदर्य को देख अर्जुन उस पर

न केवल मोहित हो उठा, बल्कि वह द्रौपदी के सौंदर्य को भी बिलकुल भूल बैठा। तीर्थयात्राएँ करने की उसकी अवधि बीत चुकी थी, फिर भी इंद्रप्रस्थ जाने की बात वह बिलकुल सोचता तक न था।

अर्जुन की इधर यह हालत थी, उधर सुभद्रा भी अर्जुन के लिए तड़प रही थी। गद नामक यादव ने सुभद्रा के मन में अर्जुन के प्रति आदरभाव पैदा किया था। इसके अलावा सबके बीच कृष्ण के द्वारा अर्जुन की प्रशंसा उसने सुन रखी थी। वह यह भी जानती थी कि यादव लोग जब भी अपने बच्चों को आशीर्वाद देते तो वे यही कहते—"तुम अर्जुन जैसे धनुर्धारी बनो!" इन सब कारणों से सुभद्रा के मन में अर्जुन बैठ गया था। इसलिए कुरुजांगल देशों से कोई यात्री आता तो सुभद्रा अर्जुन का समाचार जान लेती। उसके संबंध में पूछ-ताछ करती। अब उस यति को देखते रहने पर यही संदेह पैदा हुआ कि यह ठीक अर्जुन जैसा लगता है, शायद यही अर्जुन हो।

एक दिन अर्जुन एकांत में बैठा था। सुभद्रा ने उसकी सेवा समाप्त कर पूछा—"आप ने कौन कौन देश देखे हैं? क्या आप इंद्रप्रस्थ को जानते हैं? मेरी फूफी कुंतीदेवी कुशल हैं? युधिष्ठिर आदि पांडव कुशल हैं न? बड़ी बड़ी आँखों व लंबे हाथ वाले अर्जुन को क्या आप जानते हैं? वे बड़े पराक्रमी हैं।"

इस पर अर्जुन ने कहा—"इंद्रप्रस्थ में कुंतीदेवी, पांडव तथा द्रौपदी आराम से हैं। पर उन से छिपा कर अर्जुन यति के वेष में द्वारका में सुभद्रा के सामने हैं। मैं ही अर्जुन हूँ। तुम्हारा मुझ पर जितना प्रेम है, उससे कई गुने तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम है। एक अच्छे

मुहूर्त में मैं तुम्हारे साथ विवाह करके सुखी होऊँगा ।"

सुभद्रा लजा गयी । उसने अपना सर झुका लिया । अर्जुन अपने निवास में चला गया ।

अर्जुन और सुभद्रा की मनोदशा जानकर कृष्ण ने अर्जुन की परिचर्या करने के निमित्त रुकिमणी को नियुक्त किया । अर्जुन को प्रत्यक्ष रूप में देखने के बाद सुभद्रा बावली सी हो गयी । उसने अन्न और निद्र तक त्याग दी ।

देवकीदेवी अपनी पुत्री की यह हालत देख बोली–"पगली, तुम परेशान क्यों होती हो? तुम्हारे पिता से यह समाचार बताकर तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करने का प्रयत्न करूँगी ।"

देवकी ने सुभद्रा का समाचार अपने पति वसुदेव को सुनाया । उसने यह बात उग्रसेन, अक्रूर तथा कुछ अन्य प्रमुख लोगों को बताया और कृष्ण की अनुमति से बलराम से छिपाकर दस दिन बाद सुभद्रा एवं अर्जुन के विवाह का मुहूर्त निश्चित किया । इसके वास्ते अंतर्द्वीप में बारह दिन तक उत्सव मनाने का ढिंढोरा पिटवा दिया ।

अंतर्द्वीप बड़ा विशाल था । उस उत्सव को देखने द्वारका से बूढ़े-बच्चे, युवक-युवतियाँ सब आ पहुँचे । अपने विवाह के समय कृष्ण को भी उपस्थित देखने के लिए अर्जुन ने सुभद्रा को उकसा कर कृष्ण से पुछवाया । उसने कृष्ण से कहा–"भैया, तुम भी अंतर्द्वीप में जाओगे तो यति की सेवा नहीं हो सकती । इसलिए तुम यहीं रह जाओ ।"

इस पर कृष्ण ने कहा–"इस वक्त यति की सेवा के लिए तुम्हारे अतिरिक्त और किसी के द्वारा प्रयोजन नहीं है ।" यह कह कर कृष्ण भी अंतर्द्वीप के लिए चल पड़ा ।

बस्रा का नाविक

बहुत दिन पहले की बात है। बस्रा नगर में अबुल फ़वारिस नामक एक आदमी था। वह उस नगर के सभी मल्लाहों का नेता था। लोग कहते थे कि उसने सभी बंदरगाह देखे हैं।

एक दिन अबुल फ़वारिस समुद्र के किनारे पर अपने साथी मल्लाहों के बीच बैठा था, तब एक वृद्ध ने उसके पास आकर पूछा—"मैं तुम्हारे जहाज़ को छे महीने के लिए किराये पर लेना चाहता हूँ। इसका क्या किराया होगा, मुझे बतला दो!"

"एक हज़ार सोने के दीनार दे दो।" नाविक अबुल फ़वारिस ने जवाब दिया।

वृद्ध ने तुरंत उसे मूल्य चुका कर कहा—"मैं फिर कल आऊँगा। तुमको अपने वचन का पालन करना होगा।" यह कहकर वह चला गया।

नाविक वह धन लेकर घर चला गया। अपने जहाज़ को यात्रा के लिए तैयार किया। पत्नी व बच्चों से विदा लेकर बंदरगाह में आया। वहाँ पर वह वृद्ध उसका इंतजार कर रहा था। वृद्ध के साथ एक गुलाम और कई बोरे भी थे।

अबुल फ़वारिस की मदद से उसने सभी बोरे जहाज़ पर लदवाये, तब अपने गुलाम के साथ वह वृद्ध भी जहाज़ पर सवार हुआ। जहाज़ ने लंगर उठाया। एक ही दिशा में तीन महीने तक यात्रा कर आखिर एक टापू में पहुँचा। वृद्ध ने सीधे जहाज़ को टापू की ओर चलाया।

जहाज़ के किनारे पर पहुँचते ही लंगर डाला। तब वृद्ध ने अपने गुलाम के सर पर थोड़े बोरे उठाये, अबुल फ़वारिस को साथ ले टापू में चला गया।

कुछ घंटों के बाद वे लोग एक पहाड़ के पास पहुँचे। पहाड़ पर चढ़ने पर उन्हें एक विशाल समतल प्रदेश दिखाई पड़ा। उसमें दो सौ से ज्यादा गड्ढे खुदे हुए थे।

वृद्ध ने अबुल फ़वारिस से कहा—"मैं तुमको एक रहस्य बता देता हूँ। यह बात तुम अपने मन में रखो। मैं एक व्यापारी हूँ। मैंने इस प्रदेश में रत्नों की एक निधि का पता लगाया है। तुम्हें मेरा उपकार करना होगा। तुम इस गड्ढे में उतर कर मोतियों की सीपियों को निकालो। हम ये सारे बोरे उन सीपियों से भर देंगे। इनमें आधे तुम्हारे और आधे मेरे होंगे। फिर क्या, हमारी ज़िन्दगियाँ राजा की भांति चल निकलेंगी।"

"इन गड्ढों में मोतियों की सीपियाँ आयीं कैसे?" नाविक ने वृद्ध से पूछा।

"इन गड्ढों तथा समुद्र के बीच कई सुरंग हैं। उनके ज़रिये सीपियाँ आकर यहाँ पहुँच जाती हैं। मैं अपनी मदद के लिए तुमको साथ लाया हूँ। इसलिए यह बात तुम किसी पर प्रकट न करो।" वृद्ध ने नाविक को समझाया।

नाविक बड़ी उत्सुकता से गड्ढे में उतर पड़ा। गड्ढे में असंख्य सीपियाँ थीं। वृद्ध ने रस्सियों की मदद से ठोकरियों को गड्ढे में उतारा। उसने कई बार सीपियों से भरी ठोकरियों को ऊपर खींच लिया। अंत में कहा—"अब तुम सीपियों को न बटोरो। इनमें एक भी मोती नहीं है।"

अबुल फ़वारिस उस गड्ढे में से बाहर आया और दूसरे गड्ढे में उतरा। उसमें अनेक सीपियाँ भरी थीं। अंधेरा होने तक वह सीपियों को ठोकरियों में भरकर भेजता रहा, आखिर थककर वह चिल्ला पड़ा—"मैं थक गया हूँ। मुझे ऊपर खींच लो।"

"तुम उसी गड्ढे में रह जाओ। हो सकता है कि बाहर निकलने पर तुम मोतियों के

वास्ते मुझे मार डालोगे? तुम्हारा क्या भरोसा?" वृद्ध ने जवाब दिया।

"मैं ऐसा विचार बिलकुल नहीं रखता। मुझ पर यक़ीन करो।" अबुल फ़वारिस ने चिल्लाकर कहा। मगर वृद्ध ने उसकी परवाह न की। पहाड़ से उतरकर बंदरगाह पहुँचा और अपने जहाज़ में रवाना हुआ।

अबुल फ़वारिस ने गड्ढे में तीन दिन बिताये। वह भूख-प्यास से तड़पता रहा। बाहर निकलने को वह छटपटाता रहा, तभी उसे आदमियों की हड्डियाँ दिखाई पड़ीं। उसने सोचा कि इस वृद्ध ने उसी की भांति और अनेक लोगों को धोखा दिया है।

अबुल फ़वारिस अपने हाथों से गड्ढे के चारों तरफ़ की मिट्टी को हटाता रहा, अचानक उसे एक जगह एक सुरंग दिखाई पड़ा। उसे चौड़ा बनाने पर वह सुरंग एक आदमी के घुसने के लायक़ हो गया। उससे होकर रेंगते आगे बढ़ा तो कमर तक के बराबर पानी दिखाई दिया। अंधेरे में उसे कुछ दिखाई न देता था। वह पानी नमकीला था। उस पानी में तैरते वह कुछ और आगे बढ़ा तो दूर

पर उसे रोशनी दिखाई दी। उसकी जान में जान आयी। वह सुरंग के बाहर जाने का रास्ता था!

सुरंग को पार कर अबुल फ़वारिस समुद्र के किनारे आया। वह किनारे पर बैठे अपनी इस बुरी हालत पर चिंता करने लगा।

थोड़ी देर बाद उसे समुद्र में एक जहाज़ दिखाई दिया। उसमें आदमी खचाखच भरे थे। वह झट उठ खड़ा हुआ। अपनी पगड़ी उतार कर हवा में उड़ाने लगा। फिर ज़ोर-शोर से पुकारना शुरू किया।

जहाज उसी की ओर आ रहा था। उसने मन में निश्चय किया कि अपने अनुभव को दूसरों को नहीं सुनाना चाहिये। जहाज़ उसके समीप में रुका और वह उस पर सवार हो गया।

"तुम इस टापू में कैसे आये? अकेले क्यों यहाँ आये?" जहाज़ के यात्रियों ने उससे पूछा।

"मैं जिस जहाज़ पर सवार था वह टूट गया। मैं लकड़ी के एक तख़्ते के सहारे तैरते यहाँ आ पहुँचा।" अबुल फ़वारिस ने जवाब दिया।

जहाज़ के यात्रियों ने उस की क़िस्मत की बड़ी तारीफ़ की।

"तुम लोग कहाँ जा रहे हो?" अबुल ने जहाज़ के यात्रियों से पूछा।

"हम लोग अबिसीनिया से आ रहे हैं। यहाँ से हम हिन्दुस्तान जा रहे हैं।" यात्रियों ने कहा।

"हिन्दुस्तान में जाने के लिए मेरे कोई काम नहीं है।" अबुल ने संकोच के साथ उन लोगों से कहा।

"तुमको संकोच करने की कोई जरूरत नहीं है। रास्ते में हमें बस्रा नगर जानेवाले जहाज दिखाई देंगे। हम लोग तुमको किसी न किसी जहाज में चढ़ाकर भिजवा देंगे।" यात्रियों ने समझाया।

इस पर अबुल ने उस जहाज़ में यात्रा करने को स्वीकार किया।

जहाज चालीस दिन तक यात्रा करता रहा, पर समुद्र का किनारा कहीं न लगा।

"तुम लोग रास्ता तो भटक नहीं गये हो न?" अबुल ने यात्रियों से पूछा।

"हमें पाँच दिन से पता ही नहीं चलता कि जहाज़ किधर जा रहा है?" यात्रियों ने असली बात बतायी।

इसके बाद सबने मिलकर बड़ी देर तक प्रार्थनाएँ कीं। (और है)

१०५. सूयज नहर

सिनाय रेगिस्तान के बीच बहनेवाली यह नहर भूमध्य सागर तथा लाल सागर को मिलाती है। १८६९ में खोदी गयी इस नहर की लंबाई १०० मील है। चौड़ाई औसतन १९८ फुट है। समुद्री यात्रा करनेवाले जहाजों के यात्रा करने के लिए अनुकूल गहराई है। लंदन से बंबई आनेवाली नौकाएँ आफ्रिका के दक्षिण में स्थित समुद्री मार्ग से यात्रा करने की अपेक्षा सूयज नहर से यात्रा करने पर ५००० मील से अधिक दूरी कम हो जाती है।

Photo by Anilkumar J. Parikh
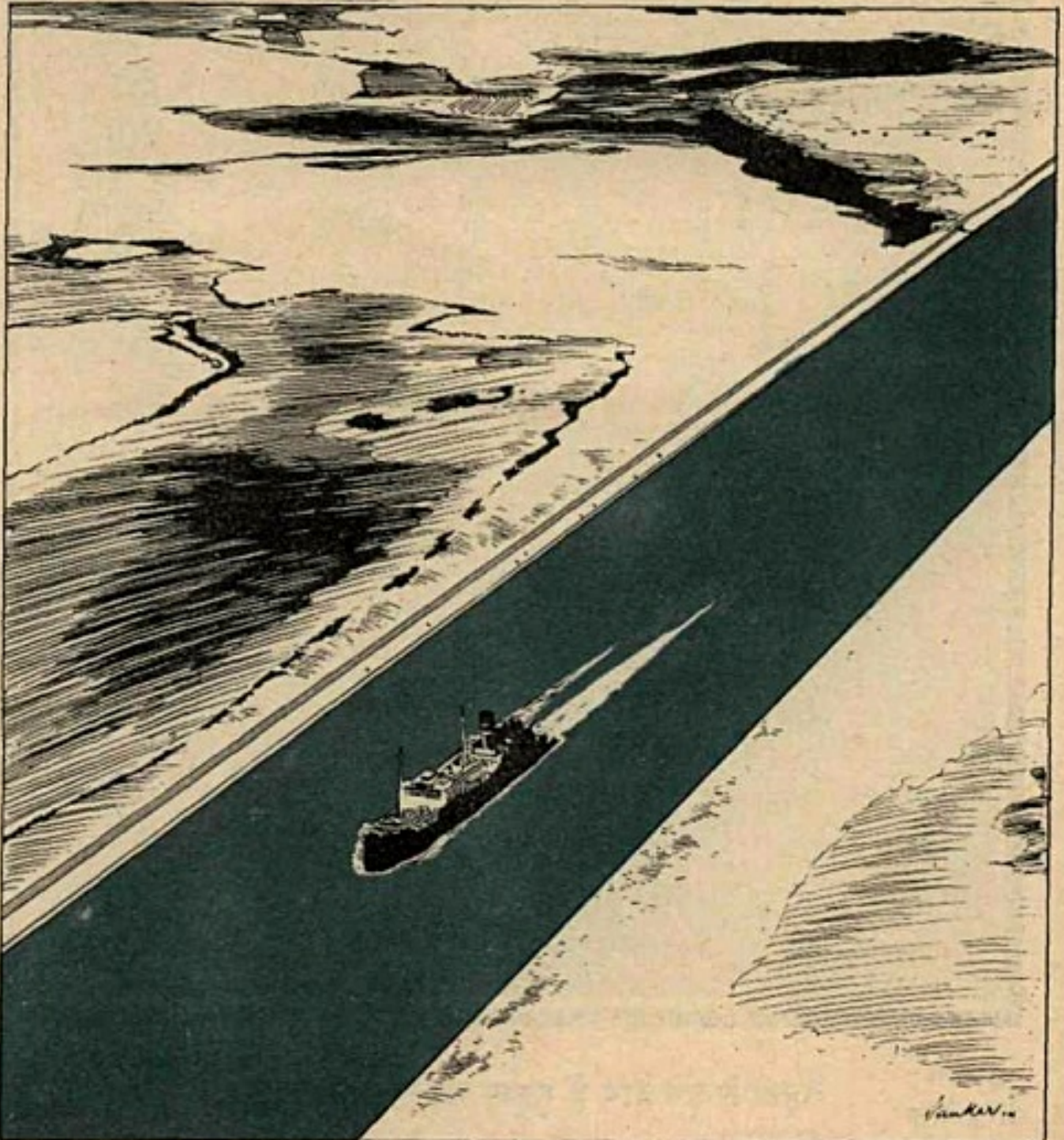
पुरस्कृत परिचयोक्ति

मेहंदी से रंगे हाथ हैं सुहाग की निशानी

प्रेषिका : करुणादेवी डोमाल - ऋषिकेश

Photo by Anilkumar J. Parikh
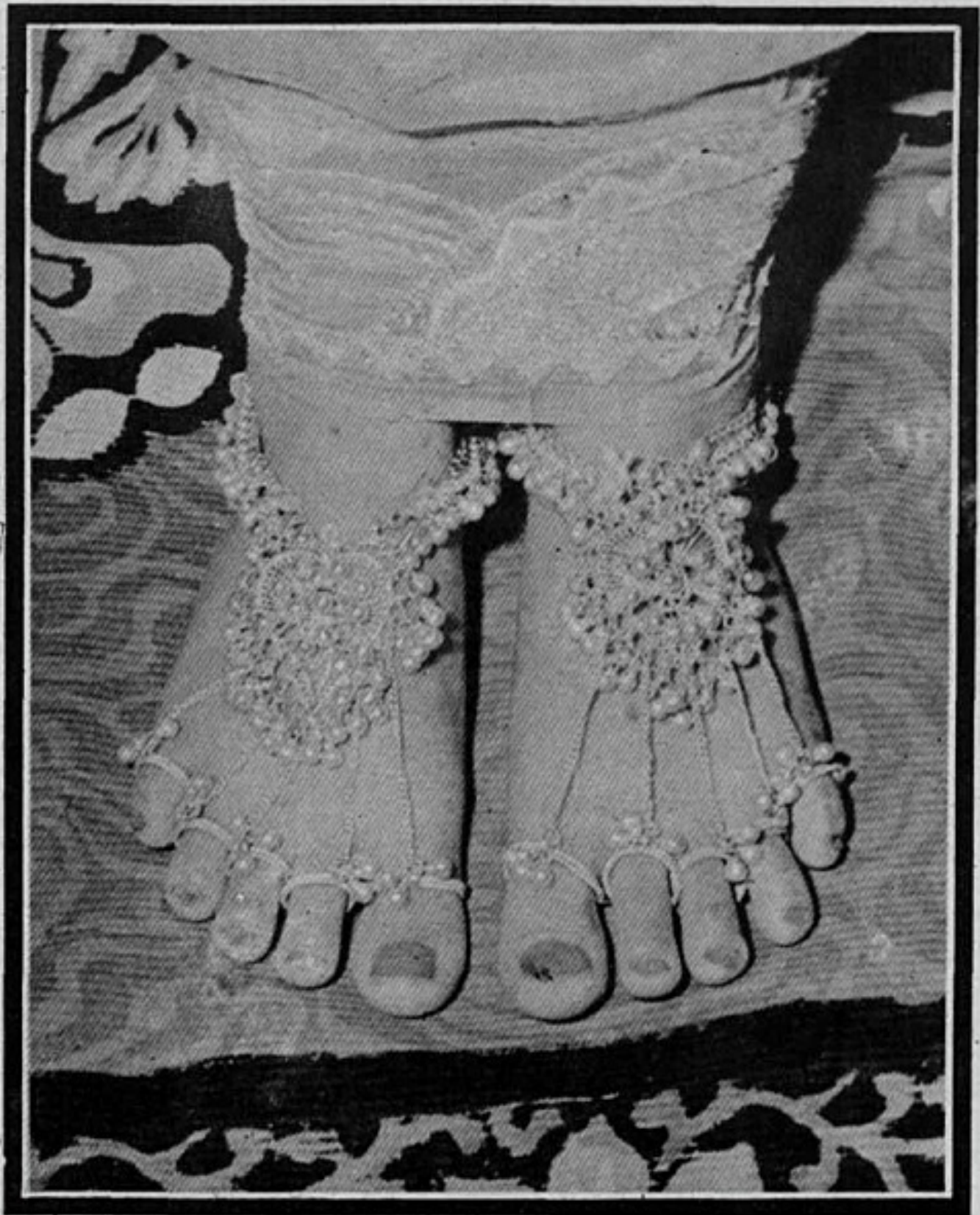
पुरस्कृत परिचयोक्ति

इन सुंदर पैरों की भी यही कहानी

प्रेषिका : करुणादेवी डोमाल - ऋषिकेश

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

नवम्बर १९७० :: पारितोषिक २०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ १० सितम्बर १९७० के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

सितम्बर – प्रतियोगिता – फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गयी हैं। इनकी प्रेषिका को २० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **मेहंदी से रंगे हाथ हैं सुहाग की निशानी**

दूसरा फ़ोटो: **इन सुंदर पैरों की भी यही कहानी**

प्रेषिका: **करुणादेवी डोमाल,**
ज्वालापुरवाली धर्मशाला, मुकर्जी मार्ग, ऋषिकेश (उ. प्र.)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से दाँतों को नियमित रूप से ब्रश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है।

क्योंकि फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट दाँतों और मसूढ़ों, दोनों की रक्षा करता है। यह दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है। इस टूथपेस्ट में मसूढ़ों की रक्षा के लिए कई खास तत्व मिले होते हैं।

मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न रोकने का सबसे बढ़िया तरीका है, दाँतों को नियमित रूप से सुबह और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से ब्रश करना। आपके बच्चे को यह ज़रूरी बात सिखाने का सबसे बढ़िया समय यही है—उसका बचपन। जी हाँ, अभी, इसी उम्र में उनमें सीखने की बड़ी लगन रहती है। इसलिए यह शुभ शुरुआत आज ही से क्यों न की जाय!

फ़ोरहॅन्स से दाँतों की देखभाल सीखने में देर क्या सवेर क्या

Forhan's
FOR THE GUMS

फ़ोरहॅन्स
दाँतों के डाक्टर द्वारा बनाया हुआ टूथपेस्ट

मुफ़्त! 'दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा' संबंधी विवरण पुस्तिका*
१० भाषाओं में मिलती है। मँगवाने का पता है: मैनर्स केन्द्रल एडवाइजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग १००३१, बम्बई-१ बी आर

नाम: ______________________ उम्र ______________
पता: ______________________________________
____

*कृपया (डाक-खर्च के लिए) १५ पैसे के टिकट साथ भेजिए और इनमें से अपनी पसन्द की भाषा के नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, बंगाली, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड

HHM 171-GF

'C. 1'